Mathura Nath Burman & Co Book-sellers, Bankipur.

चरिताष्टक ।

प्रथमभाग ।

जिसे

कथामाला, नीतिरत्नावली, सुचालशिक्षा, बोधोदय, सूबे
इतिहास, सेनराजवंश, त्रिपुरा का इतिहास, शकुंतला,
, आर्य्यकीर्ति, रसखानशतक, शिशुशिक्षा, स्वास्थ्यविद्या,
हमीरहठ, प्रार्थनाशतक आदि के रचयिता ।

पंडित प्रतापनारायण मिश्र

ाह्मण संपादक ने बंगभाषा से अनुवाद किया ।
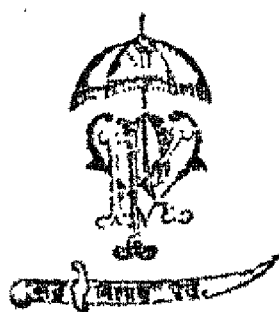
"खड्गविलास" प्रेस—बांकीपुर ।
साहबप्रसाद सिंह ने छापकर प्रकाशित किया ।
१८९४.

प्रथम बार २१०] [दाम ।) आना

चरिताष्टक—प्रथम

राजा कृष्णचन्द्र राय ।

इन्हीं ने नव्वाब मुरशिदकुली खां के अधिकार के दिनों सन् १११७ हिजरी अर्थात् १७१० ईस्वी सम्वत में कृष्ण नगर में जन्म लिया था और अनुमान ७३ वर्ष की अवस्था में जीवनयात्रा समाप्त की थी। इन के पिता का नाम राजा रघुराम राय था। इन के पूर्व पुरुष यशोहर के अन्तःपाती छाबिली परगने के कांकदी नामक ग्राम के रहनेवाले थे। अकबर बादशाह के समय ढाकावाले नव्वाब के अत्याचार से काशीनाथराय नामक इन के पुरखा कांकदी छोड़ कर नदिया ज़िला के बागवान परगनावाले वल्लभपुर गांव में उसी परगने के हरेकृष्ण ज़मींदार के आश्रय में आ बसे थे। इन्हीं काशीनाथ के पौत्र भवानंद राय ने बंगाल के नव्वाब मान सिंह और जहांगीरबादशाह की कृपा से बागवान आदि कई परगनों की ज़मींदारी प्राप्त की थी फिर इन के पुत्र गोपालराय को राजा की पदवी मिली यों ही होते २ यहां तक उन्नति हुई कि राजा रघुरामराय के समय में यह वंश बड़ा प्रतिष्ठित गिना जाने लगा और राजा रघुराम राय बंगाल भर के राजाओं के शिरोमणि समझे जाने लगे।

बड़ी भारी औसिर के उपरांत वृद्धावस्था में रघुराम को पुत्र हुआ फिर आनंद का क्या ही कहना था इस अवसर की धूम धाम से प्रजा का भी बड़ा ही उपकार हुआ। जब कुमार कृष्णचन्द्र पढ़ने लिखने योग्य हुए तो रघुराम जी ने बड़े २ शास्त्रवेत्ताओं को पढ़ाने के लिए नियत किया। घर में किसी बात की न्यूनता तो थी ही नहीं इस से पढ़ाने लिखाने का पूरा प्रबन्ध किया गया।

कृष्णचंद्र की बुद्धि भी असाधारण थी इस से उन्हों ने थोड़े ही काल में संस्कृत, बंगला, और फ़ारसी में बहुत अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। राजकुमारों को जितनी नीतिशिक्षा सीखनी आवश्यक होती है उसे भी अच्छी

रीति से सीख लिया। इस के अतिरिक्त शस्त्रविद्या में भी थोड़ा अभ्यास नहीं किया। लोग कहते हैं कि यह प्रतिज्ञा कर के सिंहादि की भौंह के बीच में बाण बेध* सकते थे। इन्हें नव्वाब मुरशिदकुली खां के भानजे मिरज़ा मुश-

---

* इस में कुछ संदेह नहीं है। भोजपुर के भदवर गांव में उज्जैन क्षत्री में कई एक मनुष्य मेरे देखे हैं जो इस से भी सूक्ष्म वस्तु को तीर, बंदूक और गुलेल से बेध सकते थे उन में बाबू कल्लू सिंह, बाबू बिभूति सिंह, बाबू त्रिवेकनारायण सिंह, बाबू मेघवर्ण सिंह, बाबू बीरभंजन सिंह, बाबू रघुनाथ सिंह आदि थे और अभी भी उस गांव में बहुत वृद्ध पुरुष हैं जो गुंजा (करजनी) को सूत में लटका कर तीर से काले भाग को काट देते हैं और लाल को छोड़ देते हैं तथा बंदूक से किसी वस्तु पर करजनी रखकर मारदेते हैं और गुलेल से भी ऐसे ही काम करते हैं इस के सिवाय बाना फेरते फेरते किसी वस्तु पर पान रखकर काट देते हैं और उस वस्तु पर जरा भी निशान नहीं लगने पाता। शीशा में किसी वस्तु का प्रतिबिंब देखकर कांध पर रखकर उलटा बंदूक से निशाना मार देते हैं।

गुड़िया ऊपर को ओर चलाकर लौटती बार दूसरी गुड़िये से उस गुड़िये को मारने का खेल तो अब भी क्षत्रियों के बालक करते हैं। चिड़ियों की दहनी बाईं आँख ताक कर मारने का निशाना तो कभी चूकता ही नहीं लड़के सब भी ऐसा काम करते हैं। निशाना चूकना तो क्षत्रियों के लड़के को मरने के बराबर लज्जा दिखाती है अभी तो ऐसे ऐसे बहुत लड़के हैं जिन के हाथ में एक छोटा डंटा और एक अंगवछा (गमछा) दे दीजिये और बहुत से मनुष्यों को कोटी ढेला चलाने कहिए परंतु उस का २ घंटे तक तो बाल भी बंका न होगा।

ऐसी ऐसी तो हजारों लीला उज्जैन और हयहोबंश के लड़के करते थे और आज भी ज़िला शाहाबाद और बलिया में कईएक को देखियेगा। गया इलाक़े के देवराजधानी के महाराज जयप्रकाश सिंह बहादुर ने छोटी छोटी अस्त्र शस्त्र की चमत्कारियों से बांकीपुर में बड़े बड़े अंगरेजों से अद्वितीय होने का प्रशंसापत्र लिया था। क्षत्रियों में टूटी फूटी दशा में भी ऐसे अभी एक नहीं हजारों मिलेंगे। अस्त्रादि की चढ़ाई आदि का वर्णन किया जाय तो एक बड़ी पुस्तक बन जायगी परंतु आगे अलबत्ते सब वस्तु के साथ इस का भी ह्रास हो जायगा। रा० दी० सिंह

ज़फ़रुद्दीन ने शस्त्रशिक्षा दी थी जो इस काम में बड़े निपुण थे और किसी बात पर क्रुद्ध होकर मुर्शिदाबाद से चले आए थे। राजा कृष्णचन्द्र राय इन्हें एक सहस्र रुपया मासिक देते थे और आदर इतना करते थे कि जब यह राजसभा में आते थे तो समस्त सभ्य उठ कर इन का स्वागत करते थे राजा स्वयं सिंहासन छोड़ कर इन्हें लेते थे। शास्त्रविद्या में यह इतने सुयोग्य थे कि उस समय के लोग इन्हें पौराणिक भीष्मपितामह तथा द्रोणाचार्यादि के समान समझते थे। राजाकृष्णचन्द्र घोड़े की पहिचान और चढ़ने का अभ्यास भी बहुत ही उत्तम रखते थे विद्या और शिष्टता तो उन की सी किसी राजवंशी में बहुधा होती ही नहीं है।

उचित अवस्था में रघुराम राय ने इन का विवाह किया और आप ने अपनी कुलरीति के अनुसार कृष्णचंद्र को राज दे संसार से सम्बन्ध छोड़ कर शेष जीवन भगवद् भजन में बिताया। प्रजावर्ग तो कृष्णचंद्र की विद्या बुद्धि और सुजनता से पहिले ही परिचित थी अतः जब इन्हों ने राज्यभार अपने हाथ में लिया तो सब लोग बड़े ही प्रसन्न हुए। राजबाटी में यह प्रवाद है कि रघुराम ने इन्हें अपनी इच्छा से राज्य न सौंप दिया था इन्हों ने बहुत से कष्ट और कौशल से उसे हस्तगत किया था किंतु इस की चर्चा नहीं है कि ऐसे सुयोग्य पुत्र को वे राज्य से क्यों वंचित रखना चाहते थे।

कुमारकृष्णचन्द्र बड़े परिश्रम और उत्साह के साथ इस बड़े भारी राज्यकार्य का निर्वाह करनेलगे। यह अपने सुख से मोहित नहीं हुए किन्तु प्रजा ही को सुखी रखने में सयत्न रहते थे सब छोटे बड़ों पर इन की दृष्टि एक सी रहती थी। विचार के समय यह मान मर्यादा वंश अथवा धन पर ध्यान न देते थे। कोई काम करते थे तो यह पहिले सोच लेते थे कि इस से प्रजा को क्लेश तो न होगा! यह किसी के भयप्रद राजा न थे किन्तु सब के सुख और संतोष का हेतु थे। न्याय के द्वारा राज्य का पालन ही इन्हें अभीष्ट था। इन की प्रजा इन के राज्य को रामराज्य समझती थी। महाराज कृष्णचंद्र विद्वान और गुणग्राही थे इस से इन की सभा में बड़े २ पंडित आया करते थे सं० ११५९ में बंगाल के प्रसिद्ध कवि भारतचन्द्र को फरासडेंगा से बुलवा के इन्हों ने अपना सभासद बनाया था इन के

अन्यान्य सभासदों में से रामप्रसादसेन और प्रसिद्ध बाणेश्वर विद्यालंकार संस्कृत कवि, शरणतर्कालंकार नैयायिक तथा अनुकूल वाचस्पति ज्योतिर्विद भी थे। इन के अतिरिक्त और भी कई बंगभाषा के कवि तथा उपस्थित-वक्ता (हाज़िर जवाब)* लोग सदैव सभा में रहा करते थे। ज्ञान हीन चाटुकारों (खुशामदियों) की उन के यहां पहुंच न होती थी। वे ज्ञानवानों ही की संगति में निर्दोष मनोविनोद के द्वारा अपने अवकाश का समय व्यतीत करते थे। बहुतलोग इन की सभा की तुलना विक्रमादित्य की नवरत्न सभा † के साथ करते थे। इन की गुणग्राहकता का एक सुंदर निदर्शन यह है कि उन के समय में वर्द्धमानप्रान्त के अन्तर्गत दलुई बाजार नामक स्थान में एक शास्त्रीजी रहते थे जो संस्कृत के असाधारण वेत्ता थे इन्हें महाराज कृष्णचंद्र ने अपने राज्य में रखने की चेष्टा की पर पंडित जी ने "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" इस वाक्य का स्मरण करके अपना वास-स्थान छोड़ना स्वीकार न किया। इस पर महाराज ने एक बार वर्द्धमान की राजसभा में पदार्पण किया। वहां के राजा चित्रसेन इन्हें बिना बुलाए विरा-जमान देखके आश्चर्यित हो गए और शुभागमन का कारण पूछा तो इन्हों ने कहा कि "हम ब्राह्मण हैं महाराज से कुछ भिक्षा मांगने आए हैं" ऐसे पुरुष के मुख से ऐसी बात सुनकर वर्द्धमानाधिपति का विस्मय और भी बढ़ गया और मांगी हुई वस्तु का देना छूटते ही अंगीकार कर लिया तो नदि-याधिपति ने कहा कि—महाराज! हमारे राज्य के [illegible] समीप आप का एक दलुई बाजार नामक छोटा सा गांव है वह हमें दे दीजिए तो बड़ा उपकार होगा—इतनी छोटी प्रार्थना स्वीकार करने में राजा चित्रसेन को विलम्ब ही क्या था? उसी समय दानपत्र लिख दिया। इस के पश्चात् जब

---

* मुक्ताराम मुखोपाध्याय, गोपालभांड़, हास्यार्णव इत्यादि।

† विक्रमादित्य महाराज की सभा में नौ बड़े प्रख्यात पंडित थे इस से यह नवरत्न सभा कहलाती है। पंडितों के नाम यह थे १ धन्वन्तरि २ क्षपणक ३ अमरसिंह ४ शंकु ५ वेतालभट्ट ६ घटकर्पर ७ कालिदास ८ वररुचि ९ वराह-मिहिर

कृष्णचंद्र जी वहां से चले आए तो बर्दवान के राजमंत्री ने राजा से निवेदन किया कि हिन्दूधर्म और हिन्दूशास्त्र के पूर्ण पक्षपाती महाराज कृष्णचन्द्र ने आज बर्द्धमान का एक अमूल्य आभूषण हर लिया दलुई बाजारवाले पंडित जी के सुयश से यह राज्य उज्वल हो रहा था। यह बात बर्द्धमानेश्वर उचित रूप से न समझ सके।

भारत के प्राचीन क्षत्रियगण जिस प्रकार असंख्य धन लगाकर नाना भांति के यज्ञ करते थे कृष्णचन्द्र ने भी वैसा ही किया। एक दिन मंत्री को यज्ञ का प्रबंध करने की आज्ञा दी उन्हों ने पंडितों को बुला के अग्निहोत्र और बाजपेय यज्ञों की व्यवस्था लेकर उन का आयोजन किया और महाराज ने दोनों को सम्पादित करके—अग्निहोत्री बाजपेयी की पदवी लाभ की। इन यज्ञों में कितना रुपया उठा था और देश के कितने लोग आए थे यह बतलाना सहज नहीं है। पश्चिमीय भाववाले पुरुष तर्क कर सकते हैं कि यह काम सचमुच अच्छा था वा नहीं, इतना व्यय और आडम्बर करके इसे पूर्ण करने की आवश्यकता थी अथवा नहीं, इतने ही द्रव्य से कोई अधिक श्रेष्ठ कर्म हो सकता था किम्वा नहीं, पर इस स्थान पर ऐसी शंकाओं का समाधान करना निष्प्रयोजन है। हम लाख बात की एक बात यही कहेंगे कि ऐसे सामर्थ्यवान हिन्दूधर्म्मावलम्बी के लिए यह कार्य किसी रीति से अनुचित न था।

महाराज कृष्णचंद्र ने देशोपकारक कार्य भी बड़े २ किए थे। एक दिन उन्हों ने सुना कि नुसरत खां नामक डाकू राज्य में बड़ा उपद्रव करता है। वह चूर्णी नदी के पूर्ववाले भयानक बन में रहता है। महाराज पता लगा के और उपयुक्त सेना लेके उस का दमन करने को जा पहुंचे पर वहां जाने पर जाना कि वह यह समाचार पाते ही भाग गया था। इस से महाराज को रात्रि वहीं बितानी पड़ी दूसरे दिन प्रातःकाल जब नदी के तीरवाले डेरे में मुंह धो रहे थे तो एक बड़ी सी रोहू मछली पानी से उछल कर उन के सामने आ गिरी। सेवकलोग उसे राजा के पास उठा लाए उस समय आनूलिया के रहनेवाले कृपाराम राय नामक राज ज्ञातीय सभासद ने कहा कि महाराज यह स्थान बड़ा उत्तम है क्योंकि यहांपर राजभोग्यसामग्री

आप से आप आ कर आप की भेंट हुई है यदि यहां पर वासस्थान बना लिए तो बड़ा सुख प्राप्त होगा राजा को भी यह स्थान बहुत सुहावना जान पड़ा इस से * एक राजभवन बनवाया और उस के तीन ओर नदी से मिली हुई परिखा खुदवाई। दोनों ओर नदी से मिली हुई परिखा उस स्थल को कंकण की नाईं शोभित करती थी इस से राजा ने उस का नाम कंकणा रक्खा और उस के आसपास बहुत से बड़े २ शिवालय बनवाके उस पुरी का नाम शिवनिवास रक्खा। महाराज ने जन्मभर वहीं निवास किया था। इन दिनों उस स्थान की पुरातन शोभा का कोई चिन्ह नहीं रहा केवल टूटेफूटे बड़े शिवमंदिर रह गए हैं। इन दिनों कृष्णनगर के समीप जो यात्रापुर है सो भी इसी रीति से बना है वहां पर राजा ने एक भवन बना के उस का नाम यात्रापुरी रक्खा था। जब कहीं जाते थे तो पहिले उसी में आके ठहरते थे एक समय किसी उच्चवंशीय कायस्थ को दक्षिण से लाकर वहां पर बसाया था फिर धीरे २ लोगों के रहवास के कारण गांव बस गया। शिवनिवास के पासवाला कृष्णपुर कृष्णगंज सुर्णिनदी के तटवाले हरधाम और आनंदधाम तथा नवद्वीप के समीपस्थ गंगावास इत्यादि भी इन्हीं महाराज ने बसाए थे। कभी २ गंगास्नान के मानस से हरधामवाली राजपुरी में टिका करते थे और वृद्धावस्था में गंगावासी होने के विचार से गंगावास में आ रहे थे।

एक बार मित्रों और साथियों सहित महाराज शिवनिवास में सुख से कालयापन कर रहे थे कि एक दिन दुपहर के समय द्वारपाल ने आकर समाचार दिया कि मुरशिदाबाद से एक दूत आया है यह सुन कर सिराजुद्दौला के डर से कृष्णचन्द्र कांप उठे क्योंकि उस के अत्याचार से उन दिनों देश की बुरी दशा हो रही थी और इन्हें भी यह शंका बनी रहती थी कि न जाने किस समय क्या कर उठावे। अस्तु द्वारवान से कहा कि दूत को टिकाओ और उस के पासवाला पत्र ले आओ। जब उस ने यह आज्ञा पालन की तो महाराज उठ कर एक सूने कमरे में गए और पत्र का आशय समझ कर एक साथ हर्ष और शोक का अनुभव करने लगे। पत्र में नवाब

* कोई २ लोग कहते हैं कि यह स्थान निरापद था इस से मरहठों के उत्पात से बचे रहने को वहां पर पुरी बसाई थी। यह जनश्रुति भी ठीक जान पड़ती है

की पदच्युति का वृत्तांत था उसी दिन रात्रि के समय महाराज ने कालीप्रसाद सिंह इत्यादि विश्वस्थ मंत्रियों को बुला के पत्र सुना कर सम्मति मांगी उस पत्र का अर्थ यह था कि:—

क्रूर स्वभाव अविचारी और अहंकारी सिराजुद्दौला ने नव्वाबी का पद प्राप्त करके बंगाल में जैसा उपद्रव मचा रक्खा है वह आप से छिपा नहीं है। पर राजधानी में रहने के कारण जैसे हमलोग उस के हाथ से व्यथित रहते हैं वैसे आप न होंगे। महात्मा मुरशिदकुली खां और अलीवर्दी के राज्य में मुरशिदाबाद जैसा सुखी तथा भाग्यशाली था वैसा अब स्वप्न में भी नहीं है जहां पहिले आनंद उत्साह और समृद्धि विराजती थी वहां अब दुखियों का हाहाकार पूरित होरहा है। हाय! नराकार राक्षस सिराजुद्दौला के राज्य में सतियों का सतीत्व धनियों का धन प्रतिष्ठितों की प्रतिष्ठा और गर्भिणियों का गर्भ बचना कठिन होरहा है। दुःख के मारे लोग अपना २ घर द्वार छोड़ छोड़ भागे जाते हैं। नव्वाब किसी की कुछ सुनता ही नहीं है। इस से हमलोग प्रार्थना करते हैं कि यहां आइए और हमें बतलाइए कि ऐसे समय में क्या करना उचित है—मंत्रियों ने मुरशिदाबाद के प्रधान पुरुषों का यह पत्र सुनकर यही अनुमति दी कि आप को अवश्य जाना चाहिए। तदनुसार राजा कृष्णचंद्र उचित समय पर वहां गए और जगतसेठ के मंदिर में षड्यंत्र की रचना करने वालों से मिल कर * अंगरेजों को बंगाल का शासन समर्पित किया और प्रपंचियों को उन के कर्म का फल दिया। जिन अंगरेजों की विद्या सभ्यता और सम्पत्ति आज दिन संसार का भूषण हो रही है उन की सहायता तथा सिराजुद्दौला के अधःपात में महाराज ने बड़ी बुद्धिमानी से यश लाभ किया था। इस कारण अंगरेजजाति इन का बड़ा आदर करती थी और सम्राट के यहां से इन्हें महाराजेन्द्र बहादुर की पदवी दिलाई थी। प्लासी के युद्ध में क्लाइव साहब ने इन्हें पांच तोपें भेंट की थीं जो कृष्णनगर की राजबाड़ी में आज तक रक्खी हैं। लोग कहते हैं कि प्लासीवाले युद्ध के समय

* फतेहचन्द्र जगतसेठ, राजा राजवल्लभ, अमीचन्द, मीरजाफर, राजा महेन्द्र नारायाण, राजा कृष्णदास, खोजा वाजिद, राजा रामनारायण, रानी भवानी आदि।

यह अपने ज्येष्ठ पुत्र शिवचंद्र समेत राज कर न दे सकने के कारण मुरशिदाबाद में कारागार (क़ैद) थे। और नव्वाब ने इन्हें षड्यंत्रकारियों में से समझ कर इन के वध की आज्ञा दे दी थी पर ज्योंही हत्याकारी लोग इन के पास पहुँचे त्योंही प्लासी का युद्ध जीतनेवाली सेना ने इन्हें बचा लिया था। जब नव्वाब मीरकासिम की अंगरेजों से लड़ाई लगरही थी तब भी यह दोनों पिता पुत्र मुंगेर में कारागारवास करते थे और अंगरेजों के पक्षपाती होने के कारण प्राणदंड की भी आज्ञा पा चुके थे किन्तु उस समय केवल बुद्धि के बल से इन्हों ने अपनी रक्षा की थी।

महाराज कृष्णचन्द्र की बुद्धिमत्ता के विषय में बहुत से कथानक प्रसिद्ध हैं उन में से कुछ हम यहां लिखते हैं। एक बार इन्हें छकाने के लिए किसी चतुर चित्रकार ने आंधी आने के समय का चित्र खींचकर दिखलाया उसे देखकर इन्हों ने कोषाध्यक्ष से कहा कि इसे एक रुपया पारितोषिक और सौ रुपए मार्ग का खर्च दे दो। सभासदों ने इस का कारण पूछा तो उत्तर दिया कि जो उड़ते हुए बांस के पत्ते का सिरा नीचे की ओर झुका हुआ बनाता है उसे पारितोषिक में एक रुपया देदेना बहुत है। पर उस ने परिश्रम बड़ा किया है इस से आने जाने का खर्च दे देना चाहिए। चित्रकार ने समझा था कि राजा इतने कौशल को समझ न सकेंगे पर यह बात सुनकर उस ने बड़ी ही प्रशंसा की और चलता फिरता हुआ।

एक बार इन का एक सभासद किसी काम के लिए कहीं गया था इस से राजा ने कह दिया था कि कहीं कोई अनोखी वस्तु मिले तो हमारे लिए लेते आना पर सभासद को कोई ऐसा पदार्थ न मिला अतः उस का मन कुछ उदास हो गया। एक स्थान पर एक कारीगर दुर्गा जी की प्रतिमा बना रहा था उस ने इसे उदास सा देख कर कारण पूछा तो इस ने बतला दिया इस पर उस ने अपने नए दुपट्टे पर सियाही का दाग कर के कहा—यह अनोखी ही वस्तु है इसे महाराज के लिये लेते जाइए—सभासद ने उसे पागल समझ कर लेना स्वीकार न किया पर कई लोगों के बहुत कहने सुनने से ले लिया और राजा से सब वृत्तांत कह कर बड़े संकोच के साथ वस्त्र दे दिया राजा उसे देख कर बहुत प्रसन्न हुए और चित्रकार को बुलवा के पांच सौ रुपए दिए तथा सब लोगों को उस की निपुणता का व्यौरा समझा

दिया उस ने दाग तो अपनी मन से बनाया था पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक केवल दो ही सूत काले किए थे।

नव्वाब अलीवर्दी खां के समय में इन पर राजस्व संबंधी दशलाख रुपया पुरुषों का ऋण था और नव्वाब ने बारहलाख नज़राने में भी मांगे पर इतना धन यह न दे सकते थे इस से उस ने इन्हें कारागार में भेज दिया किन्तु अपने सद्गुण और चतुरता से यह छूट भी आए और नव्वाब के बड़े भारी स्नेह पात्र हो गए। सन् ११९१ हिजरी (१७८३ ई०) में इन की मृत्यु हुई थी। यह बड़े उत्तम पुरुष थे। दुःखियों का दुःख न देख सकते थे। चाहे जैसे हो उन्हें सुखी करने में यत्नवान हो जाते थे। अच्छे कामों में व्यय भी बहुत ही करते थे। सड़क, घाट, सराय, तालाब आदि सर्व साधारण के सुखकारक पदार्थ बनवाने में बड़ी रुचि रखते थे। विद्यारसिकों का उत्साह बढ़ाने में भी बहुत रुपया उठाते थे। बहुत से अध्यापकों के लिए वृत्ति नियत कर रक्खी थी। बहुत से पंडितों का पालन करते थे और उन के साथ शास्त्र की चर्चा बड़ी प्रसन्नता से करते रहते थे। इन की सभा में विद्वानों का बड़ा सत्कार होता था। बंगाल के कवि भारतचंद्र को आश्रय देके उन की भविष्यत प्रख्याति का सूत्रपात इन्हीं ने किया था। हिन्दू धर्म पर इन की अत्यंत ही श्रद्धा थी * अस्मात् शास्त्र के अनुसार सदा उस का

---

* योगदर्शन भाष्य टिप्पणीकार निखिल शास्त्र निष्णात महात्मा बालराम उदासी ने नदिया (नवद्वीप) में यह आख्यायिका सुना है कि गोआड़ी (कृष्णनगर) के राजा कृष्णचंद्र राय को कोई सरस्वति का मंत्र आता था उसी से यह सत्यासत्य का निर्णय करते थे और उस की विधि यह थी कि ब्राह्मण की कुमारी कन्या के हाथ में खड़ी (खड़ा) देते थे और मंत्र पढ़कर उस कन्या के माथ पर हाथ रखते थे इस से उस कन्या में कोई दैवीशक्ति आ जाती थी, इस लिये उस से जो जो बातें संदेह की पूछी जाती थीं वह ज्यों का त्यों खड़ी से संस्कृत पद्य में लिख देती थी और उसी को लोग सत्य मानलेते थे। बंगदेश में गौरांग को गोस्वामीलोग महाप्रभु कहते थे और साधारणलोग भगवद्भक्त कहते थे इस विषय में आपस में विवाद हुआ कि ठीक क्या है? इस संदेह निवारण के लिये दोनों दल के मनुष्य राजा साहिब के पास गये और राजा साहिब ने पूर्वोक्त

अनुष्ठान करते रहते थे। धर्म्मानुराग में अतिशयता होने से इनके अनुष्ठान में बहुधा गोलमाल भी हो जाया करता है विशेषतः जब राजा किसी मत का पक्षपाती होता है तो और भी अनर्थ होता है इस का कुछ उदाहरण नीचे लिखी कथाओं से जान पड़ेगा:—

एक बार नदिया में महामारी ने प्रबलता की इस से राजा ने आज्ञा दे दी कि श्यामापूजा की रात्रि को लाख पूजा होगी तदनुसार दूसरे दिन समाचार मिला कि एक गोप ब्राह्मण ने सात ठौर पूजा की अतः राजा ने

रीति से ब्राह्मण की कुमारी कन्या के हाथ में खड़ी देकर और माथे पर हाथ रखकर सरस्वति का मंत्र पढ़ा तो कन्या ने निम्न लिखित पद्य को लिखा। "गौराङ्गो भगवद् भक्तो नच पूर्णो नचांशकः" इस का अर्थ यह है कि गौरांग भगवद् का भक्त है न पूर्ण अवतार है न अंशावतार है। अब तक नवद्वीपस्थ प्रधान पंडित भुवनमोहन-विद्यारत्नभट्टाचार्य्य प्रभृति इसी अर्थ को समर्थन करते हैं। परंतु गोस्वामीलोग इस का दूसरा यह अर्थ करते हैं कि गौरांग भगवत्भक्त नहीं है और अंश भी नहीं है किंतु पूर्णावतार है, परंतु अब भी अपने अपने मानेहुए अर्थ के समर्थन में दोनों कटिबद्ध दल है। सच है—चौ०। जाकी रही भावना जैसी। प्रभु मूरति तिन देखी तैसी।

एक बार यह संदेह उपस्थित हुआ कि श्रीमद्भागवत व्यास जी का बनाया है अथवा नहीं कोई कहता था कि व्यास जी का बनाया नहीं है क्योंकि और और पुराणों की भाषा से श्रीमद्भागवत की भाषा का कुछ मेल नहीं है कोई कहता था कि व्यासजी सामर्थ थे जैसी भाषा चाहें वैसी लिखें कोई कहता था कि एकही मनुष्य युवावस्था में दूसरी रीति की भाषा लिखता है वृद्धावस्था में दूसरी रीति की लिखता है भाषा से निर्णय नहीं होता यह विवाद भी कृष्णनगर के राजाकृष्णचंद्रराय के यहां पहुंचा उन्होंने पूर्वोक्त रीति से निश्चय किया तो ब्राह्मण की कुमारी कन्या ने निम्न लिखित पद्य लिखा "केनापि व्यास तुल्येन" इस का अर्थ यह है कि किसी व्यास तुल्य महात्मा का बनाया है। और यही अर्थ नवद्वीप में प्रसिद्ध है परंतु गोस्वामीलोग इस अर्थ को नहीं मानते और इस का दूसरा अर्थ भी नहीं करते। ये दोनों आख्यायिका बंगदेश भर में प्रसिद्ध हैं प० दी० सिं०।

धर्म की रक्षा के विचार से उन्हें दंड देना चाहा तो उस ने कहा—महाराज ज्वाला महल में तो इतनी पूजाएं हुई हैं कि उन के लिए पुरोहित मिलना कठिन था—इस से जान पड़ता है कि वह धर्म्म कार्य ठीक विधि से नहीं हुवा क्योंकि ठीक समय पर ठीक रीति से एक ही पूजा हो सकती है।

कृष्णचन्द्र के चरित्र में एक कलंक की बात यह सुनी जाती है कि ढाका के गवरनर राजाराजवल्लभ ने अपनी बालविधवा कन्या के पुनर्विवाह की नदिया के समाजवाले पंडितों से व्यवस्था लेने के लिए राजा से अनुरोध किया था तब इन्हों ने बड़ी चतुरता और नीचता दिखलाई थी।

बहुतेरे कहते हैं कि उन के चरित्र का कोई २ अंश दूषित था, उन्हों ने अपने अन्य पुत्रों की वंचना करके ज्येष्ठ पुत्र शिवचंद्र राय ही को राज्य का सारा अधिकार सौंपा था। पर हमारी समझ में और विषयों के मध्य चाहे जो कहा जाय किंतु यह रीति बहुत दिन से चली आती है कि राजा का बड़ा ही लड़का गद्दी पर बैठता है सूर्यवंश और चंद्रवंश में इस के बहुत से उदाहरण मिलते हैं। हां बंगाल में इस रीति को बहुतों के कथनानुसार इन्हीं ने चलाया था इस के लिए इन्हें चाहे कोई कैसा ही समझे। पर इन के वंश का परिणाम देख के कहा जा सकता है कि बंगदेश के लिए ज्येष्ठाधिकार की प्रथा उपयोगी नहीं है।

यहां पर उन के और २ पुत्रों का कुछ वृत्तांत लिखना असंगत नहीं जान पड़ता। महाराज के दो रानी थीं उन में बड़ी रानी के तो शिवचंद्र भैरवचंद्र, महेशचंद्र, हरचंद्र, तथा ईशानचन्द्र हुए थे और छोटी रानी के अकेले शम्भुचन्द्र थे। छोटी रानी के विवाह संबंध में लोग कहते हैं कि रानाघाट से उत्तर पूरब एक माइल पर नौकाड़ी (नावों का अड्डा) एक छोटा सा गांव है उस के दक्षिण ओर चूर्णी नदी का एक खाल है जिसे वाचकोर खाल कहते हैं अगले दिनों में वह बड़े वेग से बहता था इस बात का कुछ पता गांव के नाम से भी पाया जाता है। एक बार महाराज उस नदी में नाव पर से जा रहे थे (जान पड़ता है कि श्रीनगरवाली राजपुरी का मार्ग वही था) इतने में नौकाड़ी के घाट पर एक परम सुंदरी कन्या को जल क्रीड़ा करते हुए देखकर उस का पता लगाया तो विदित हुआ कि ब्राह्मण

की बेटी है इस से उस के पिता को बुलाके व्याह की इच्छा प्रगट की ब्राह्मण ने कहा यह तो बड़े सौभाग्य का विषय है पर छोटे कुल में कन्या देने से हमारी प्रतिष्ठा घट जायगी—किन्तु अंत में व्याह हो गया। कुछ काल के उपरांत नई स्त्री को चांदी के पलंग पर पड़े हुए देख कर एक दिन राजा ने कहा कि—देखो! हमारे साथ व्याह करने से तुम्हें चांदी की चारपाई मिली—इस पर रानी ने उत्तर दिया कि—और भी उतर के व्याह होता तो सोने का पलंग मिलता * यह तेज पूर्ण सगर्भ वाक्य सुन के राजा बड़े ही प्रसन्न हुए।

इन के मरने पर शंभुचंद्र इत्यादि ने शिव निवास छोड़ कर इधर उधर रहना स्वीकार किया। गंगा जी से चूर्णी नदी को जाते हुए कुछ दूर पर दोनों ओर ब्रह्मधाम और आनंदधाम देख पड़ते हैं इन्हीं में से पहिले में शंभुचंद्र औ दूसरे में ईशान चंद्र आकर रहे थे। महेशचंद्र शिवनिवास में जा बसे और भैरवचंद्र की सन्तति न थी इस से वह भी इन्हीं के साथ रहे। यह बहुधा वहीं रहते थे कभी २ कृष्ण नगर में भी आते थे। इन राजकुमारों में से किसे कितना धन मिला था यह बात नहीं खुली। केवल शंभुचंद्र ने अपनी योग्यता से बहुत सा रुपया और धरती हस्तगत की थी। राजा कृष्ण चन्द्र का कोई पुत्र निकम्मा न था सभी उत्तम गुण सम्पन्न और सच्चरित्र थे। इन दिनों शिवचन्द्र का घराना छोड़ के और सभी की सन्तान हीन दशा में है।

जगन्नाथतर्कपंचानन †।

इन्हों ने प्रसिद्ध त्रिबेणी ग्राम में ११०२ हिजरी (१६९५ ई०) के मध्य जन्म लिया था। रुद्रदेव तर्कवागीश इन के पिता थे। जब इन का जन्म हुआ

---

* अर्थात् तुम से व्याह करके जाति घटाई तो चांदी की चारपाई मिली जो मुरशिदाबाद के नव्वाब से व्याह करके और भी जाति घटाई होती तो सोने का पलंग मिलता।

† आजकल के वृद्धलोग कहते हैं—कनाकपुरनिवासी रघुनाथ राय तर्कवाचस्पति का त्रिबेणी ग्राम में एक टोल था उस के निकट एक कुटी में भगवती नाम की एक विधवा ब्राह्मणी रहती थी उन के पांच वर्ष का लड़का

था तब इन के पिता छियासठ वर्ष के थे। तर्कवागीश बड़े पंडित थे संस्कृत में उन के बनाए कई ग्रंथ हैं। उन की कोई स्थिर आजीविका न थी निमंत्रण और शिष्य यजमानों से जो कुछ मिल जाता था उसी से बड़े कुटुंब की पालना कर लेते थे। निस्संतान और निर्धन होने से उन्हें बहुत दिन कष्ट भोगना पड़ा था पर बुढ़ापे में लड़का होने से ऐसा आनंद हुआ मानों सूखे हुए ठूंठ में फल लगे।

लड़के के नाम करण के समय श्वसुर की इच्छा से पुत्र का नाम जगन्नाथ रक्खा। लोग कहते हैं किसी ज्योतिषी ने कहा था कि वृद्धावस्था में रुद्रदेव के एक अलौकिक गुणवाला पुत्र होगा इस वाक्य के विश्वास पर वासुदेव ब्रह्मचारी ने इन महावृद्ध पंडित को अपनी कन्या ब्याह दी थी और कन्या के पुत्र होने के निमित्त श्री जगदीशपुरी में जाकर बहुत सा पूजन पाठ भी किया था कुछ दिन में देवता ने आज्ञा दी कि * तुम्हारा

था इस ब्राह्मणी को भट्टाचार्य जी—भगी—कहते थे। भगी चौबाड़े का बहुत काम करती थीं। इन्हों ने एक दिन लड़के को चौबाड़े में आग लेने भेजा वहां रघुनाथ राय ने कहा—क्या हाथ में आग लेओगे? इस पर लड़का झट से अंजुली में धूल उठा लाया औ कहा इस पर दे दीजिए—यह बुद्धिमानी देख के पंडित जी ने उसी समय लड़के की मा को बुलाके कहा—यह बालक हमें दे दो—भगवती ने दे दिया तो तर्क वाचस्पति ने मुहूर्त देख के उसे पढ़ाना आरम्भ किया लड़के ने थोड़े ही दिन में समग्र व्याकरण पढ़ लिया। यही बालक सु प्रसिद्ध जगन्नाथ तर्क पंचानन हैं। पर हमने जगन्नाथ का बाल्यचरित्र उन के प्रपौत्र वामनदास तर्क वाचस्पति इत्यादि के द्वारा संग्रह किया है अब बुद्धिमान जन स्वयं विचार लें कि कौन सी कथा सत्य है।

* महात्मा बालरामउदासीजी से मालूम हुआ कि उत्तरपाड़ा में जब ये संवत् १८४१।४७। थे तब वहां उन्होंने अनेक स्त्री पुरुषों को देखा कि गंगा में स्नान कर ओदे वस्त्र से साष्टाङ्ग दंडवत करते करते तारकेश्वर के समीप आते थे परन्तु मंदिर के इधर ही में शिवजी स्वप्न दे देते थे कि तुम यह काम करो तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध होगा और किसी को यह भी स्वप्न होता था कि तुम्हारा अभीष्ट सिद्ध न होगा। यह बात साधारण से साधारणलोग भी बंगदेश

मनोरथ सफल होगा बालक का नाम जगन्नाथ रखना इसी से यह नाम रक्खा गया।

जगन्नाथ लड़कपन में बड़े कुशील थे बहुत लोग कहते हैं कि जो

के जानते हैं। कितने मनुष्यों को यह स्वप्न हुआ कि अमुक मनुष्य का जूठा खाओ तुम्हारा कल्याण होगा और खाने के बाद रोग छूट गया। रा. दी. मि.।

जिल्द ९ संख्या ३९ के भारतजीवन में निम्न लिखित लेख छपा था।

श्रीतारकेश्वर महादेवजी का मंदिर एक अत्यन्त ही प्रसिद्ध स्थान है। न कि केवल हिन्दू ही किन्तु मुसल्मान भी दूर दूर के प्रदेशों से मन्नत मान कर आते हैं कि उन की बीमारियां दूर हों तो वे श्रद्धानुसार पूजन करेंगे। हाल ही में एक मुसल्मान वहां आया जो गठिया के रोग से अत्यंत पीड़ित था यहां तक कि उसे अपना जीवन बोझ विदित होने लगा और उसने अपना प्राण आत्म-घात कर देना चाहा। किन्तु इस भयानक कार्य्य के पूर्व उसने बिचारा कि मैं चलकर श्रीतारकेश्वर जी में जागरण इत्यादि करूँ तो मेरा यह सङ्कट दूर हो, यह सोच किसी किसी प्रकार बड़े२ कष्ट और परिश्रमों से वह वहां पहुँचा किन्तु उस के पास इतना द्रव्य न था कि वह नियमित कर दे कर मंदिर के बहिर्द्वार तक भी पहुँच कर उपासना कर सके। उस ने वहांवालों की अनेक मिन्नत की किन्तु किसी ने भी उस की न सुनी। अंत को दुःखी हो वह वहां से चला गया और समीप ही के एक खेत में जा कर पड़ रहा कि यदि महादेव जी सत्य हैं तो चाहे खेत हो चाहे मन्दिर हो मेरी भक्ति और श्रद्धा से अवश्य प्रसन्न होंगे बस वहीं खुले मैदान में सर्दी और भयंकर जन्तुओं का भय परित्याग कर वह पड़ा रहा और रात भर श्रीमहादेव जी उपासना और ध्यान में एकाग्रचित्त था। प्रातःकाल के समय स्वप्न हुआ-कि मानो कोई व्यक्ति उस से कहता हो कि उठ खड़ा हो तेरी प्रार्थना सुनी गई तू अच्छा हो गया। यह सुनते ही वह जाग उठा और खड़ा हो गया उसका दर्द बिलकुल जाता रहा उसी क्षण वह लौटा और स्नान कर श्रद्धानुसार उस ने पूजन किया। इस के सैकड़ों ही साक्षी वहां मौजूद हैं। पाठकगण! देखिये सच्ची भक्ति और श्रद्धा का कैसा तत्काल फल मिलता है नहीं तो बिना भक्ति के घण्टा हिलाते जन्म बीत जाता है पूजा करते२ वृद्ध हो मर जाते हैं किन्तु देवता की प्रसन्नता नहीं होती। हो कहां से "भक्त्या त्वनन्यया लभ्यो हरिरन्य द्विडम्बनम्"।

लड़का लड़काई में दुष्ट होता है वह सयाना होने पर बुद्धिमान होता है। यह बात निरी झूठ नहीं भी जान पड़ती विशेषतः जगन्नाथ का जीवनचरित तो इस की पुष्टता का मानो प्रमाण है। यह बाल्यावस्था में जैसे दुराचारी थे वैसे ही युवा होने पर असाधारण पंडित भी निकले। यह बात नहीं है कि जिसे बुद्धिमान होना होता है वही दुष्ट होता है। दुष्टता के कारण और भी होते हैं जैसे जगन्नाथ बूढ़े बाप के लड़के थे इस से पिता को बहुत दुलारे थे, फिर आठ वर्ष की अवस्था में मा मर गई इस से और भी बिना दाबाधानी के हो गए ऐसे लड़कों को कौन नहीं जानता कि निरे सनीचर होते हैं।

यह गाली बकते और मारते हुए पथिकों का दूर तक पीछा करते थे। स्त्रियों के घड़े ढेले से फोड़कर ठट्ठा मारते थे। पेड़ पर चढ़के नीचे वाले लोगों पर मलमूत्र कर देते थे और लड़ाई झगड़ा मार कूट चोरी आदि से सभी को उकताए रहते थे। यह ऐसे दुष्ट थे कि एक बार बांस बेड़ियावाले पंचानन महादेव जी के पंडा से एक बकरा मांगा पर पंडा ने न दिया इस पर आप रूप ने महादेव जी की मूर्ति चुराकर किसी तालाब में फेंक दी। दुष्टता के गुण में यह बाल्यकाल से प्रसिद्ध हो गए थे इस से आस पास के गांववाले इन्हें सब जानते थे। मूर्ति चुरा जाने पर सभी ने समझ लिया कि यह करतूत इन्हीं की है—परन्तु—जब पंडा ने प्रति वर्ष एक बकरा देने कहा तो जल में से मूर्ति निकाल लाए। ऐसी २ दुष्टता यह नित्य ही करते रहते थे। पर इन की एक मौसी इन्हें माता ही के समान प्यार करती थी।

पांच वर्ष की अवस्था में इन के पिता ने व्याकरण तथा कोष सिखाना आरंभ किया और कुछ दिन बीतने पर दो चार साहित्य भी सिखलाये फिर तो यह अपनी तीव्र बुद्धि से ग्रन्थों को धड़ाधड़ पढ़ने लगे। एक दिन कई एक पड़ोसियों ने इन की नटखटी से खीझकर रुद्रदेव को उलहना दिया इस पर उन्हों ने इन्हें बुलाके कहा—तू बड़ाही पाजी है न लिखता है न पढ़ता है सब को तंग किए रहता है क्या तू ने हमें दुःख देने ही को जन्म लिया है जा पोथी उठा लाव देखें तो क्या पढ़ा है जगन्नाथ

पुस्तक ले आए और कहा—आज का पाठ सुनाऊं कि वह सुनाऊं जो कल पढ़ना होगा ?—उन्हों ने आश्चर्य में कहा कलवाला पाठ देखें तो कैसे पढ़ेगा— यह बिना पढ़ा भी पोथी खोल के सुना चले यह शक्ति देखकर पिता को ऐसा आनंद प्राप्त हुआ जिस का वर्णन नहीं हो सकता।

बाल्यावस्था में यह ऐसे थे कि जिस बात का हठ करते थे छोड़ना जानते ही न थे *जिस वस्तु को चाहते वह जब तक मिले २ तब तक माता को मार और गालियों से व्याकुल कर देते थे पर वह वस्तु पाते ही सीधे भी हो जाते थे।

पिता से कोष और व्याकरण पढ़ के इन्हों ने अपने ताऊ भवदेवन्याया-लंकार के पास त्रांसबेड़िया (हंसबाटी) में धर्मशास्त्र पढ़ना आरंभ किया इस में भी थोड़े ही काल में योग्यता लाभ कर ली इस शास्त्र में उपयुक्त दक्षता प्राप्त की थी तब इन की अवस्था केवल बारह वर्ष की थी।

फिर १११६ हिजरी (१७०८ ई०) में मेड़ ग्राम की एक सुलक्षणी कन्या से पिता ने इन का विवाह कर दिया तब यह चौदह वर्ष के थे। माता पिता वृद्ध होते हैं तो बहुधा अपनी संतान का ब्याह लड़कपन में कर देते हैं।

इस के उपरांत न्याय पढ़ने का लग्गा लगाया। यह शास्त्र बड़ा कठिन है इस का विचारना कैसा बहुतेरों को समझना भी सहज नहीं होता पर जगन्नाथ ने बुद्धि और परिश्रम से थोड़े ही दिन में इस की भी योग्यता प्राप्त कर ली। यहां तक कि पठनारंभ से वर्ष ही भर के पश्चात न्याय-शास्त्र के विचार द्वारा एक नदिया निवासी प्रख्यात पंडित को सन्तुष्ट कर दिया। इस कथा से पढ़नेवाले बड़े प्रसन्न होंगे इस से हम यहां पर लिखते हैं:—

---

* कविवर गोस्वामी तुलसीदास जी ने रामचंद्र के विषय में भी ऐसे ही लिखा है यथा—

सवैया।

कबहूं ससि मांगत आरि करें कबहु प्रतिबिम्ब निहारि डरें।
कबहूं करताल बजाइ कै नाचत मातु सबै मन मोद भरें।
कबहूं रिसिआइ कहैं हठि कै पुनि लेत सोई जेहि लागि अरें।
अवधेस के बालक चारि सदा तुलसी मन मन्दिर में बिहरैं॥ १॥

कमालपुर के रहनेवाले रघुदेव तर्कवाचस्पति ने त्रिवेणीग्राम में चौबाड़ा (टोल) बनाया था और वहीं शिष्यों को पढ़ाया करते थे जगन्नाथ भी इसी में पढ़ते थे एक दिन रमावल्लभ विद्यावागीश वहां आए जिन्हों ने नवद्वीप में बड़े श्रम से पढ़ा था । और न्यायशास्त्र की टीका करके बंगाल में बड़ा नाम पाया था । यह महामहोपाध्याय जगदीश तर्कालंकार के पौत्र थे। इन्हों ने चौबाड़े में बड़े अहंकार के साथ शास्त्रार्थ छेड़ा और कई शिष्यों समेत अध्यापक जी को परास्त किया और विजयी हो के चल दिए यह समाचार जगन्नाथ ने नहीं पाया क्योंकि भोजन के लिए घर गए थे पर जब चौबाड़े में आकर सुना कि रमावल्लभ आतिथ्य ग्रहण किए बिना चले गए तो यह उसी समय उन के खोज में निकले त्रिवेणी और बांसबेड़िया के मार्ग में उन से भेंट हुई। यह यहां के पंडितों में गुण है कि मिलते ही शास्त्रार्थ ठान देते हैं तदनुसार दोनों में बातें होने लगीं तो रमावल्लभ इन की बुद्धि और विद्या से बड़े ही प्रसन्न हुए और चौबाड़े में लौट आए तथा भोजन करके बड़े आदर से बिदा हुए।

जगन्नाथ ने सात आठ वर्ष और भी परिश्रम करके कई शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त किया लिखने पढ़ने का इन्हें ऐसा व्यसन था कि पंडितों से मिलते ही शास्त्र की चर्चा उठाते थे और जिस में एक बार विचार करते थे वही इन्हें भली भांति ज्ञात जाता था इस प्रकार देश विदेश के सभी विद्वानों में इन की प्रसिद्धी हो गई थी। अब इन का स्वभाव भी पलट गया था बड़े सज्जन हो गए थे सच है विद्या का फल ही ऐसा है।

जब यह चालीस वर्ष के हुए तब इन के पिता का परलोकवास हुआ पिता के पास कुछ संपत्ति न थी, इस से गृहस्थी का भार आपड़ने से यह घबरा उठे ज्यों त्यों करके श्राद्ध कर्म तो पूरा हुआ पर खाने के लिए खाने का सुभीता कहां से हो ? अतः अब इन्हें कमाने की चिंता चढ़ी। इन के गुरु ने इस अवसर पर इन्हें तर्कपंचानन का पद प्रदान किया और इन्हों ने जैसे तैसे एक पाठशाला खोल के थोड़े से विद्यार्थियों को पढ़ाना आरंभ किया धीरे २ नानास्थान से निमंत्रण पत्र आनेलगे इस से बहुत कुछ धन भी हो गया। तीन पुत्र भी हुए कालिदास, कृष्णचंद और रामनिधि इन में

से मंझले और छोटे लड़कों के भी कई संतति हुई पर इन में वृन्दावनचंद्र के ज्येष्ठ पुत्र घनश्याम बड़े भारी पंडित हुए ।

जगन्नाथ का जन्म कैसे शुभ मुहूर्त में हुआ था कि उन की विद्या तथा प्रतिष्ठा का कोई अन्त नहीं पा सका यदि धनी होना चाहते तो वह भी असंख्य हो जाता तो भी बहुत ही कुछ कमाया भी था । इन को पिता की पूंजी केवल एक पीतल का अमृती नामक पात्र, अनुमान दस बीघा धरती और फूस से छाया हुआ टूटा फूटा एक घर था किन्तु यह एक लाख रुपये नगद और चार सहस्र वार्षिक आय की भूमि छोड़ कर मरे थे । इस भूमि का अधिकांश बर्द्धमानाधिपति तिलकचंद्र बहादुर ने दिया था।

बहुतेरे कहते हैं कि कोष इन से अधिक था इस के प्रमाण में लोगों का कथन है कि बहुत से मंत्र शिष्य किए थे । यह बात सच है कि इन के चेले बहुत थे पर उन में बहुत से ऐसे लोग थे जो इन के शिष्य ही कहला कर पेट पालते थे । आगे चल कर हम इन की निर्लोभता का प्रमाण भी देंगे । उस समय के प्रधानशासनकर्ता सर जानशोर साहब और विचारपति सर विलियम जोंस साहब आदि के अनुरोध से इन्हों ने बहुत सी धर्मशास्त्र की व्यवस्थाओं का अनुवाद किया था "अठारह विवादों के विचार का ग्रन्थ" औ "विवादभंगार्णव" दो बड़ी पुस्तकें लिखी थीं इन के बनाने के समय इन्हें कम्पनी की ओर से सात सौ रुपया मासिक मिलता था और जब बना चुके थे तब ३००) रु० पाते थे । रामचरितवर्णनादि दो एक नाटक तथा न्यायशास्त्र के भी कई ग्रन्थ इन्हों ने रचे थे पर इन का बहुत सा समय पढ़ाने में बीतता था नहीं तो और भी बहुत ग्रन्थ लिखते। कलकत्ते के हाईकोर्ट में बहुतेरे मुकद्दमे इन्हीं की व्यवस्था से निर्धारित होते थे । मुर्शिदाबाद के नव्वाब ने इन्हें एक मुहर दी थी उस पर "सुधीवर कवि विपिन्द्र श्रीयुक्त जगन्नाथ तर्कपंचानन भट्टाचार्य" खुदा हुआ था वही मुहर यह व्यवस्था पत्रों में कर देते थे इन के पढ़ाने की प्रशंसा यहां तक फैली थी कि दूर २ से विद्यार्थी आते थे जिन की संख्या सौ तक पहुंच गई थी । इन सब छात्रों को यह नित्य भोजन देते थे इन के पढ़ाए हुए सभी बालक प्रसिद्ध पंडित हुए उन में से किसी २ की संतति अद्यापि कहीं २ विद्या की चर्चा में नाम कर रही है। जगन्नाथ मृत्यु के दो एक मास पूर्व तक विद्यादान करते रहे थे।

सभी धनी दरिद्री पंडित मूर्ख उन्हें देवता के समान मानते थे। नाना प्रकार की शास्त्रीय बातें सुनने की सदा ही बहुत से लोग इन के यहां आते थे। इन की बुद्धि बड़ी ही प्रबल थी कोई कैसा ही प्रश्न करे उस का संतोषजनक उत्तर दे देते थे इस से लोग अद्भुत २ प्रश्न भी लाया करते थे और आनंद प्राप्त करते रहते थे।

जिन राजा नवकृष्ण बहादुर ने अंगरेजों के उदयकाल में साठ रुपए की मुंशीगीरी से राजपद लाभ किया था उन की इन से बड़ी मित्रता थी कलकत्ता के शोभाबाजार में उन का घर था वहां से वे नित्य इन के पास जाते और सब प्रकार सहायता करते थे उन्हीं ने इन्हें महल बनवा दिया था और दुर्गापूजा में साहाय्य दिया था। दीवान नंदकुमार राय भी इन्हें गुरू की नाईं मानते थे जिन्हों ने नव्वाब के यहां बड़े २ काम करके गौरव प्राप्त किया था। नंदकुमार को जब अवकाश मिलता था तभी इन से भेंट करने आया करते थे। उस समय के सदर दीवानी के प्रधान विचारपति हारिंटन साहब भी अवकाश पाकर इन से मिलने आते थे और व्यवस्थाओं की मीमांसा में सहाय लेते थे इन का उन का भी बड़ा स्नेह हो गया था।

असाधारण विद्या बुद्धि विशारद जगद्विख्यात सर विलियम जोंस इसी समय में बंगाल के प्रबंध कर्ता थे * वे भी अपनी मेम समेत इन के दर्शन करने आते थे एक बार किसीने उन की मेम से कहा कि चलकर पूजावाली दालान में बैठिए इस पर उन्हों ने उत्तर दिया कि—आवांम्लेच्छौ (हम दोनों जने म्लेच्छ है) और वहां नहीं गई पर पंडित जी के घर में जाकर पड़ोस की स्त्रियों को अपनी बातों में मोहित कर लिया।

नदिया के जजमाहब ने अपने बंगला शिक्षक रामलोचन कविराज से इन की प्रशंसा सुन कर भेंट करनी चाही रामलोचन इन्हें बड़े आग्रह से कृष्णनगर में ले आए साहब इन से मिलकर बड़े ही प्रसन्न हुए और कई व्यवस्थाओं के अनुवाद का अनुरोध किया तदनुसार तर्कपंचानन कुछ दिन वहां रहे और साहब की इच्छा को पूर्ण करके अपने गांव आए। उन दिनों

* १७४६ ई० की २० वीं सितंबर को लंदन में इन का जन्म हुआ था

देश मे डाकू बहुत थे इस से यह ब्राह्मण सदा भयातुर रहा करते थे क्या कि इन के घर में रुपया था यह समाचार सरविलियम जोन्स ने पाया तो इन के यहां रखवाली करने को कई सिपाही रख दिए जिन का वेतन साहब ही देते थे।

बर्द्धमान के महाराज कीर्तिचन्द्र राय ने इन्हें बड़ी प्रीति से बहुत सी भूमि दी थी और इन के गांव में तालाब बनवा दिया था।

राजा नवकृष्ण ने इन्हें एक तअल्लुका देना चाहा जिस की आमदनी बहुत थी पर इन्हों ने यह सोच कर नहीं लिया कि रुपया बड़े २ अनर्थ करता है धनी होकर हमारे वंशज बाबू बन जायंगे और पढ़ने में ध्यान न देंगे किंतु राजा ने त्रिवेणी के निकट 'छंदे-पोता' नाम का छोटा सा तअल्लुका फिर भी इस नियम के साथ दे ही दिया कि सब प्रबंध हम कर दिया करेंगे।

नवद्वीप के महाराज कृष्णचन्द्रराय ने इन का अध्यापन विषयक उत्साह बढ़ाने को उखुड़ा परगने में सात सौ बीघा भूमि दी थी उसी के आय से इन के वंशवाले आज तक आनंद करते हैं।

पूंटिया के राजा ने इन की व्यवस्था से एक मुकद्दमा जीता था इस से बहुत सा रुपया दिया। तर्कपंचानन ने बाल्यावस्था में बहुत मन लगा के पढ़ा था इसी कारण चारों ओर से रुपया चला आता था। हे बालकगण! तुम भी पढ़ने में जी लगाओ तो जगन्नाथ के समान हो सकते हो।

इन का ज्यों २ लाभ बढ़ता था त्यों ही त्यों अच्छे कामों में व्यय भी यह अधिक करते थे। दुर्गोत्सव और श्यामापूजादि में बहुत सा धन तथा अन्न वितरण करते थे। जो कोई अतिथि आता वह भी विमुख न जाता था पर जान पड़ता है आतिथ्य में इन का खर्च बहुत न पड़ता था। एक बार एक अतिथि चूल्हे में से भूना हुआ बैंगन न निकाल सकने के कारण दीवार पर यह श्लोक लिख कर चला गया था कि:—

कीटाकुलित वार्त्ताकुरंकारखुरूपणोपमा।
पंचाननाद्विनिष्क्रांता न निष्क्रांताहुताशनात्॥ १॥

अर्थात् कीड़ों से भरा हुआ चूहे के रुपया समान एक बैंगन जो तर्कपंचानन के घर से निकला भी तो आग में से न निकला॥

इन की स्मरणशक्ति के विषय में एक कहावत प्रसिद्ध है कि एक दिन यह घाट पर बैठे पूजा कर रहे थे इतने में एक बजरा आगया जिस में से दो साधारण अंगरेज उतर कर आपस में झगड़ने लगे इन्होंने यह वृत्तांत सुन पाया—अस्तु—उन झगड़नेवालोंने एक दूसरे पर नालिश कर दी विचारपति ने पूछा—तुम्हारा कोई गवाह है?—उन्हों ने कहा नहीं हम में जब मार कूट हुई थी तब एक बूढ़ा आदमी पानी के पास बैठा हुवा हाथों को उठाय हुए कुछ कर रहा था—हाकिम ने बिलेती में यह पता लगाने को दूत भेजा कि उस दिन उस समय घाट पर कौन था तदारा विदित हुवा कि तर्कपंचानन पूजा कर रहे थे—अस्तु—यह अदालत में बुलाए गए तो झगड़े के विषय में पूछने पर बतलाया कि हम ने इन दोनों को मार कूट करते देखा है बातें भी सुनी हैं पर हम अंगरेजी नहीं जानते इस से बातों का अर्थ नहीं समझ सके तो भी यह बतला सकते हैं कि दोनों में से किस ने किस कौन बात कही थी—इस के उपरांत पंडित जी ने दोनों के मुख से निकले हुए शब्द ज्यों के त्यों कह सुनाए *। साहब सुन कर सुन्न

---

* बनारस गोवर्धनसराय निवासी पंडितवर शीतलाप्रसादत्रिपाठी बनारस कालेज के अध्यापक और जानकीमंगल के कर्ता और उन के सहोदर भाई पंडितवर छोटूराम त्रिपाठी पटना कालिज के हेडपंडित कहते थे कि जानकीमंगल जब महाराज ईश्वरीप्रसादनारायण सिंह बहादुर के आज्ञानुसार बना और खेलने का प्रबंध हुआ तो एक लड़का जो लक्ष्मण बना था वह बीमार पड़ गया और यह हाल सभा जुटने पर मालूम हुआ अब तो रंग में भंग का समय हुआ और यह ठहरा कि दूसरे दिन नाटक होगा उसी समय में बाबू हरिश्चंद्र जी आए और पूछे कि आज नाटक क्यों न होगा महाराज बहादुर ने स्वयं पछताने के साथ कहा कि जो लक्ष्मण के पाठ लेनेवाले थे वह बीमार पड़ गए। इस पर बाबू साहब ने कहा कि मैं लक्ष्मण बनूंगा पोथी मुझे दीजिये पाठ देखूं इस पर महाराज ने कहा इस समय याद होना कठिन है बाबू साहब ने कहा कि गुस्ताखी माफ हो मैं एक पाठ क्या समग्र जानकीमंगल स्मरण कर लूंगा एक बार देखना चाहिए महाराज ने पुस्तक दी और बाबू साहब ने

हो गए और कुछ काल के उपरांत बोले कि तुम झूठ कहते हो कि हम अंगरेज़ी नहीं जानते, जानते न होते तो इतनी बातें कभी याद न रख सकते इस के उत्तर में जगन्नाथ ने कहा कि---अंगरेज़ी का हम एक अक्षर भी नहीं जानते --पर इस के सुनने से हाकिम का संदेह दूर नहीं हुआ अंत में बहुत अनुसन्धान करने से जाना कि पांच वर्ष की अवस्था से हम बुढ़ापे तक उन्हों ने केवल संस्कृत ही पढ़ी है जिलापति ने यह सोच कर इन्हें कचहरी का कुछ काम भी सौंप दिया था कि यह असाधारण पुरुष है राज कार्य में रहेंगे तो बड़ा अच्छा होगा।

हम कह सकते हैं कि यह स्मरण शक्ति सदा ग्रंथों का विचार करने ही से इन्हें प्राप्त हुई थी। लोगों का कथन है कि इन को कालिदास जी का अभिज्ञान शाकुंतल नाटक समग्र कंठस्थ था †।

घंटा भर के भीतर में महाराज के हाथ में पुस्तक दे कर ज्यों का त्यों अक्षर अक्षर जानकीमंगल सुना दिया तब महाराज बहुत प्रसन्न हुए और बाबू हरिश्चंद्र लक्ष्मण बने और नाटक खेला गया। भा० दो० मिश्र।

† हम ने प्रसिद्ध मानसरामायण के वक्ता और मानसशंकावली, मानसभाव प्रकाशिका, वर्णरामायण और वैराग्य संदीपिनी की टीका आदि के कर्ता पं० बन्दनपाठक जी को तुलसीदास जी के मानस रामचरित्र, विनयपत्रिकादि बारहों ग्रंथ कंठस्थ देखा है बल्कि प्रशंसा तो इस बात की थी कि तुलसी दास के ग्रंथों में कौन कौन अक्षर तथा शब्द कितने बार आये हैं यह भी कह देते थे और भाव अर्थ प्रमाणादि में तो अद्वितीय थे। और इसी प्रकार महाराज द्विज-राज काशिराज ईश्वरीप्रसादनारायणसिंह के सदा मिरजापुर निवासी लाला छक्कन लाल थे। उन्हें भी तुलसीदास के कुल ग्रंथ कंठस्थ थे। और मुंगेर ज़िला बरहिया गांव में बाबू महादेवदत्तसिंह को भी तुलसीदास जी के समग्रग्रंथ कंठस्थ थे। कान्हपुर निवासी (हरिप्रसाद मिश्र के पाटगुरु) पंडित मुकुंदबाजपेयी जो पटना गुरहट्टा पाठशाला में मुख्य अध्यापक थे उन्हें व्याकरण और षट्शास्त्र और मतांतर के ग्रंथ कंठस्थ थे। पटनाप्रांत के माधोपुर निवासी पंडित अनंतराम मिश्र जो पंडित मुकुंदराम बाजपेयी के विद्यार्थी और प्रसिद्ध महात्मा बनारस निवासी भास्करानंदस्वामी के विद्यागुरु हैं और सम्प्रति बनारस दुर्गाकुंड पर

यह जैसे अद्वितीय पण्डित थे वैसा ही दीर्घजीवन भी प्राप्त किया था सन १२१४ हिजरी अर्थात् १८०५ ई० में इन की मृत्यु हुई थी मरने के समय १११ वर्ष के थे और इस के एक मास पूर्व दुपहर के पहिले २ चार पांच कोस तक जा सकते थे सुनने और देखने की शक्ति तनिक भी न घटी थी। त्रिवेणी के प्रसिद्ध अध्यापक रामदास तर्कवाचस्पति (जो अभी मरे हैं) इन के प्रपौत्र थे इन की मृत्यु के समय रामदास आठ दस वर्ष के थे। अपने सुयोग्य पौत्र घनश्याम के मरने के शोक में जगन्नाथ तर्क पंचानन का देहांत हुआ था।

जातीय धर्म्म में उन्हें बड़ी श्रद्धा थी और उस का अनुष्ठान बड़े यत्न से करते थे यह बड़े कौतुकी और निष्कपट मनुष्य थे। लोग तो इन्हें बहुत बड़ा समझते थे पर अभिमान इन को छू न गया था।

देखो जगन्नाथ कैसे असाधारण व्यक्ति थे श्रम करके थोड़ी ही अवस्था में पंडित हो गए थे और पंडितों से विचार करते रहते थे। पिता के श्राद्ध में निरे निर्धन हो गए थे पर पीछे से भली भांति कमा लिया था देश विदेश में नाम भी कैसा पाया था और देश का उपकार भी वैसा किया था।

भारतचन्द्र रायगुणाकर।

यह ११२६ हिजरी (१७१२ ई०) में बर्द्धमान के भुरसुट परगनावाले

रहते हैं उन्हें वेदांतभाष्य पर्यंत और व्याकरणभाष्य पर्यंत और षट्काव्य और उपनिषद् समग्र कंठस्थ है। और ज़िला बलिया में गानवट के प्रसिद्ध पंडित याेगेश्वर ओझा जो हैमवती नामक परिभाषेन्दुशेखर का टीका बनाये हैं। सम्प्रति बनारस में रहते हैं और अद्वितीय वृद्ध पंडित हैं उन्हें सिद्धांतकौमुदी से लेकर भाष्य पर्यंत समग्र कंठस्थ है। और उसी ज़िला के उदयांछपरा के रहने-वाले प्रसिद्ध पंडित बाबूरामउपाध्याय जी जो पटना गुरहट्टा पाठशाला में पढ़ाते थे और सम्प्रति बनारससेवन करते हैं उन को, सारस्वत, चंद्रिका, कौमुदी, अमर और षट्काव्य कंठस्थ है, पं० बाबू रामउपाध्याय जी को जैसी सारस्वत चंद्रिका की व्युत्पत्ति थी ऐसी बहुत कम पंडितों में पाई जाती है। ऐसे और मेरे देखे कईएक मनुष्य अभी वर्त्तमान हैं जिन्हें भागवत वाल्मीकिआदि कंठस्थ हैं।

पांडुया ग्राम के मध्य ब्राह्मणकुल में नरेंद्रनारायण राय के घर उत्पन्न हुए थे। इन के पिता को भुरसुट में जमींदारी थी और घर में धन भी बहुत था इस से राजा वा राय कहलाते थे। पर जातीय उपाधि मुखोपाध्याय थी। नरेन्द्र नारायण जी के चार पुत्र थे उन में सब से छोटे भारतचंद्र थे।

जब इन की अवस्था दस वर्ष की थी तब बर्द्धमान के राजा कीर्तिचंद्र की माता ने जमींदारी के किसी झगड़े के कारण क्रुद्ध होकर इन के पिता की सारी सम्पत्ति तथा घर द्वार लुटवा लिया इस से नरेंद्रनारायण यहां तक निर्धन हो गए कि कुटुम्ब का पालन भी कठिन पड़ गया। अतः भारत-चंद्र को मंडलघाट परगनेवाले गाजीपुर के निकट नवापाड़ा में इन के मामा के यहां भेज दिया वहीं इन्हों ने लिखना पढ़ना भी आरंभ किया। चौदह वर्ष की अवस्था में इन्हें संक्षिप्तसार व्याकरण और अमरकोष का अच्छा बोध हो गया था फिर ताजपुर के निकट सारदग्राम के किसी ब्राह्मण की कन्या से विवाह करके अपने घर लौट आए वहां इस अयोग्य विवाह के कारण भाइयों ने तिरस्कार किया और संस्कृत पढ़ने में भी बहुत विघ्न आया क्योंकि मुसलमानों का राज्य होने से उस का आदर नहीं था। भारतचंद्र ने इन बातों से दुःखी होकर घर छोड़ दिया और फिरते २ हुगली के उधर देवानन्दपुरवासी कायस्थ मुंशी रामचंद्र के यहां रहकर फारसी पढ़नेलगे इस समय में यह संस्कृत और बंगभाषा की कविता कर लेते थे पर किसी विषय को पूर्ण रीति से लिख कर किसी को दिखाते न थे फारसी में भी इन्हों ने अच्छा श्रम किया। भोजन एक ही बार बना लेते थे और दोनों पहर खाते थे एक भांटा भून कर दोनों जून उसी के साथ भात खा लेते थे।

एक दिन मुंशी जी ने इन्हें सत्यनारायण की कथा बांचने को कहा पर पोथी न मिली इस से इन्हों ने थोड़े ही काल में एक नई पुस्तक बना के सुना दी श्रोतागण बड़े प्रसन्न हुए यह बात हर एक के लिए सहज नहीं है कि थोड़ी देर में उत्तम ग्रंथ रच लें तिस पर भी इन की आयु पंद्रह बरस से अधिक न थी तब सत्यनारायणकथा लिखी थी इन की बनाई इस कथा की दो पोथी हैं पर यह नहीं विदित होता कि दूसरी कब बनाई थी। कुछ हो इन की कविता के वृक्ष का अंकुर यही कथा थी।

फिर इन्हों ने १२२८ हिजरी में माता पिता भ्रातादि से भेंट की। सबलोग इन के संस्कृत और फारसी पांडित्य से बड़े आनंदित हुए। इन के पिता ने फिर एक इजारा लिया तब यह पिता और भ्राताओं की आज्ञा से इजारासंबंधी मुख़्तार होकर बर्द्धमान गए पर एक बार इन के भाइयों ने खज़ाना भेजने में विलम्ब किया, इस से राजा ने इजारा छीन लिया। इस विषय में भारत ने कुछ तर्क वितर्क किया तो इन्हें भी कारागार भेज दिया। वहां से यह जोड़ तोड़ लगाके भागे और महाराष्ट्रों की दूसरी राजधानी कटक में चले गये। वहां के दयावान सूबेदार शिवभट्ट के आश्रय में कुछ दिन रह कर जगन्नाथदेव के दर्शन की अभिलाषा प्रगट की तो शासनकर्त्ता ने पंडों के नाम चिट्ठी लिख दी, इस से इन्हें मार्ग में कहीं कर नहीं देना पड़ता था और पुरी में नित्य अटका मिलता था उस में सेवक समेत इन का भोजन हो जाता था।

वहां इन्हों ने भागवतादि वैष्णव ग्रंथ पाठ किए और वैष्णवों से प्रेमचर्चा करते रहे।

वहां से वृंदावनयात्रा के मानस से कृष्णनगर आए। यहां इन के मातृ का घर था उन्हों ने इन का आगतस्वागत किया और संसार से उदास देख कर बहुत समझाया बुझाया पर इन्हों ने कहा कि जब तक रुपया न कमा लेंगे घर न जावेंगे। इसी अवसर पर कुछ दिन सारदाग्राम में श्वसुर के यहां भी रहे और चलते समय अपने श्वसुर नरोत्तमाचार्य से कह गए कि—हमारे पिता वा भ्राता लिवाने आवें तोभी अपनीकन्या को न भेजिएगा—

फिर यह फरासीसी गवर्नमेन्ट के दीवान इंद्रनारायण चौधरी के पास फरासडांगा गए उन्हों ने इन का बड़ा आदर किया और कहा कि—आप बड़े सुयोग्य और सद्वंशज हैं आप का उपकार सर्वथा कर्तव्य है अतः कुछ दिन यहां रहिए हम अवसर पाते ही कहीं अच्छे पद पर नियुक्त करने की चेष्टा करेंगे।

राजा कृष्णचंद्र राय कभी २ चौधरी जी से मिलने आया करते थे तदनुसार उन्हों ने एक दिन राजा से इन के पालनार्थ अनुरोध किया तो राजा ने इन्हें चालीस रुपया मासिक पर अपने यहां नियत कर लिया यहां यह नित्य प्रातःकाल और संध्या समय राजा को दो नई कविता सुनाते थे।

राजा ने इन्हें उन की इस शक्ति पर रीझ के 'गुणाकर' का पद प्रदान किया और परस्पर असंबद्ध उदभट काव्य करने का निषेध करके मुकुन्दराम चक्रवर्ती * कृत चंडीग्रंथ के ढंग पर अन्नदामंगल लिखने की आज्ञा दी। भारतचंद्र ने बड़े यत्न से उस की रचना की। विद्यासुंदर प्रस्ताव भी उसी ग्रंथ में सन्निवेशित कर दिया। इन्हों ने उस ग्रंथ में राजा की आज्ञा प्राप्ति की चर्चा कई स्थल पर की है यथा—

आज्ञा दीन्ही कृष्णचन्द्र धरनी के ईश्वर।
रच्यो ग्रंथ तब राय सुभारतचंद्र गुनाकर॥ †

कुछ दिन के उपरांत फिर संस्कृत के रसमंजरी नामक ग्रंथ का बंगाली में अनुवाद किया उस को कविता बहुत अच्छी है ऐसे ग्रंथ बहुत थोड़े हैं पर पुस्तक का अधिकांश ऐसा अश्लील है कि अकेले में पढ़ने से भी लज्जा आती है यदि दोष न होता तो इन का काव्य साहित्यभंडार की सम्पत्ति थी। अन्नदामंगल, विद्यासुंदर और रसमंजरी इन के प्रधान ग्रंथ हैं और इन के कारण इन का नाम भी बहुत हुआ। अन्नदामंगल बनाने के समय यह चालीस वर्ष के थे।

राय गुणाकर की कृष्णचंद्र बड़ी प्रतिष्ठा करने लगे एक दिन उन्हों ने इन के संसार धर्म के विषय में पूछा तो इन्हों ने कहा कि "मेरी स्त्री तो अपने पिता के घर रहती है और मैं भाइयों से प्रीति न होने के कारण घर में रहना नहीं चाहता यदि स्थान मिले तो स्त्री के साथ रहूं" इस पर राजा ने घर बनाने को रुपया और मूलाजोड़ गांव में छः सै रुपए साल की आमदनी का इजारा इन्हें दे दिया। इन्हों ने वहां जाकर वाधालों का एक घर भाड़े लिया और अपना घर बन चुकने तक उसी में रहे स्त्री को भी लिवा लाए। यह समाचार पा के इन के पिता भी वहीं चले आए और कुछ दिन के उपरांत संसार से चल बसे भारत ने इन का क्रियाकर्म करके फिर कृष्णनगर

* दो एक लोगों ने इन से पहले भी बंगला में कविता की थी पर उस भाषा के आदि कवि इन्हीं को कहना चाहिए इन्हें लोग कवि कंकण भी कहते हैं।

† आज्ञा दिलो कृष्णचंद्र धरणी ईश्वर। रचिलो भारतचंद्रराय गुणाकर॥

में कुछ दिन बास किया और वहां नाना विषय पर काव्य करते रहे यों ही कभी कृष्णनगर कभी मूलाजोड़ कभी फरासडांगा में रहते थे।

नव्वाब अलीवर्दी के समय जब मरहटों का उपद्रव बहुत बढ़ गया था (जो बंगाल में बर्गी का हंगामा कहलाता है) तब बर्द्धमान के राजा तिलकचंद्र की माता डर के मारे भाग कर मूलाजोड़ के पूर्व दक्षिण काउगाछी गांव में आ बसी थीं और मूलाजोड़ बहुत निकट होने के कारण कृष्णचंद्र की सभा में उस का इजारा लेने के लिए प्रार्थना की थी तथा उन्हों ने देना स्वीकार भी कर लिया था इस से भारतचंद्र ने दुःखी होकर राजा से कहा—हम कहां जायं—तो कृष्णचन्द्र ने आनारपुर के अंतःपाती गुस्ते ग्राम में १५० बीघा और मूलाजोड़ में १६ बीघा धरती का स्वत्व त्याग कर इन्हें दे दिया और गुस्ते में रहने की अनुमति दी पर मूलाजोड़ के लोग इन से इतने प्रसन्न थे कि इन्हें वहीं रहना पड़ा।

बर्द्धमान की रानी ने रामदेव नाग के नाम से मूलाजोड़ का इजारा लिया था। उसी नाग * के द्वारा ग्राम वासियों की दुर्दशा देखकर और स्वयं भी उस के हाथ से दुःखी होकर भारतचन्द्र ने संस्कृत में "नागाष्टक" बना के कृष्णनगर भेजा इस कविता में भारत ने कुछ अपनी विद्वता प्रकाश की थी इस से राजा को बड़ा शोक हुआ और शीघ्र ही नागजनित अत्याचार का निवारण कर दिया पंडित लोग नागाष्टक की बड़ी प्रशंसा करते हैं।

भारतचन्द्र ने बंगभाषा में बड़ी प्रशंसनीय कविता की है और संस्कृत हिन्दी ब्रजभाषा फारसी में भी अपनी कविता शक्ति का परिचय दिया है। इन के पहिले कवि कंकण ‡ कृत्तिवास, काशीदास आदि कई कवि हो चुके थे पर इन का सा लालित्य और चातुर्य किसी के काव्य में नहीं है।

---

* नाग का दूसरा अर्थ सर्प।

‡ यहां कृत्तिवास के रामायण का हाल नहीं लिखा कारण यह है कि कृत्तिवास पठानों के समय में हुए अथवा मोगल सूबेदारों के समय में हुए यह निश्चय नहीं होता। कृत्तिवास और काशीराम दास ने कथा सुनकर रामायण और महाभारत बनाया था। इन लोगों के बनाये ग्रंथों के देखने से जान पड़ता है कि अच्छी तरह से कथादि के द्वारा बंगाले की साहित्य का बड़ा उपकार

क्या ही खेद की बात है कि यह केवल ४८ ही वर्ष की अवस्था में ११६७ हिजरी (१७६० ई०) ही में विषमाग्नि के रोग से परलोक वासी हो गए राजा ने इन को रोग मुक्त करने के बहुत से यत्न किए पर कुछ न हुवा।

देखो भारतचन्द्र राय ने लड़कपन में कितना कष्ट सहा था, आठ ही नौ वर्ष की अवस्था में घर छूटा, पराए आसरे में रह कर केवल भांटा और भात से पेट पालके पढ़ना पड़ा, मुख्तारी में कारावास झेला भाइयों से सहारा न पाकर देश परदेश फिरे पर पढ़ने लिखने में बड़ा परिश्रम किया था इस से अंत में सुख पाया और राजसभा में प्रतिष्ठित हुए।

मरने के कुछ दिन पूर्व इन्हों ने एक चंडी नामक हिंदी बंगला का नाटक लिखना आरंभ किया था पर कराल काल ने उसे पूरा न करने दिया नहीं तो बड़ा अच्छा ग्रन्थ होता।

कृष्णपान्ती। *

यह प्रसिद्ध धनी और धार्मिक थे इन का जीवनचरित भी मनोहर है

हुआ यह कह सकते हैं। कृत्तिवास जाति के ब्राह्मण और प्रसिद्ध फुलिया गांव के रहनेवाले थे। उन की काव्यरचना की रीति देखने से उन का समय कवि कंकण से पहले ठहराते हैं। काशीराम दास देव कायस्थ और काटोयार के नगीच सिंगी गांव में रहते थे वे अब से कुछ अधिक दो सौ बरस पहले उत्पन्न हुये थे बरद्वान के ज़िले में दामुन्या गांव में कविकंकण मुकुंदराम चक्रवर्ती उत्पन्न हुये थे। ये मुसलमानों के अत्याचार के कारण अपनी जन्मभूमि छोड़कर मेदनीपुर के ज़िले में आकर गांव के राजा बांकुड़ादेव के आधीन रहते थे और उन के बेटे रघुनाथ राय की सलाह से इन्हों ने चंडीकाव्य बनाया था। चंडी-काव्य बने प्रायः ३०० बरस हुये। वैद्यजाति को कवि रामप्रसाद सेन की जन्मभूमि हाला शहर के बीच कुमारहट्ट नामक स्थान में थी। रामकृष्णचन्द्र ने इन को १०० बिगहा जागीर और कविरंजन का खिताब दिया था। (सूबे बंगाल का इतिहास)।

* इन की जाति का उपाधि पाल है पर पिता पान बेचने से पान्ती कहलाए और इस बंश के कोई २ लोग कहते हैं कि पान्ती शब्द पाल ही का रूपांतर है।

इस से हम सक्षेप मे लिखते है। नदिया ज़िला के रणाघाट नामक स्थान में १७४९ ई० अर्थात ११५६ हिजरी के अगहन में तेली के घर इन का जन्म हुवा था। पिता का नाम सहस्रराम पाती था वे बड़े दरिद्री थे पान बेंचकर घर चलाते थे यह बड़े लड़के थे दो भाई इन से छोटे भी थे। जब कृष्णनगर में राजा रघुराम राय राज्य करते थे तभी जड़ानतला (जो इन दिनों राणाघाट का पूर्व प्रांत है) में कई लुटेरे रहते थे राणा नामक एक जन उन का मुखिया था उस के घर से उत्तर पश्चिम एक माइल पर माता भांगा अर्थात चूर्णी नदी के निकट बड़ा जंगल था उसी में उस का अड्डा था वहीं वह अपने साथियों से सलाह करता और लूट का माल रखता था उसी समय की स्थापित हुई राणा घाट के मध्यस्थलशाली सिद्धेश्वरीजी की मूर्ति है राणा और घाटी (अड्डा) इन्हीं दो शब्दों से इस स्थान का नाम राणाघाट पड़ा है राजारघुराम के समय से गणना करने पर ज्ञान पड़ता है कि राणाघाट की सृष्टि तथा पुष्टि दोही सौ वर्ष में हुई है।

इन डाकुओं का नाश कैसे हुवा, कहां २ से आकर कौन २ जाति किस २ रीति से यहां बसीं यह दस्यु पूर्ण वन चूर्णी और पूर्व बंगाल रेलवे का मध्यवर्ती राणाघाट किस प्रकार से हुवा यहां इन बातों की चर्चा का कोई काम नहीं है। पर प्रसंगवश तेली जाति का संक्षिप्तविवरण लिखा जाता है क्योंकि तेलियों को इधर के बहुत लोग ऐसा नीच समझते हैं कि उन के हाथ का पानी तक नहीं पीते यहां तेली लोग नव "शाक" में समझे जाते हैं। हमलोग भली भांति जानते हैं कि तेली प्रतिलोम क्रम * से ब्राह्मण और वैश्यानी से उत्पन्न हैं। और सुपारी बेंचना इन का जातीय व्यवसाय है यह बात वृहत्कूर्मपुराण में लिखी है शब्द कल्पद्रुम में नव-शाक जाति के विषय में पराशर जी का यह वचन देखने में आता है कि—

* संकर जाति के दो भेद हैं—पिता उच्च जाति और माता नीच कुल की हो तो अनुलोम क्रम कहलाता है तथा इस से उलटा प्रतिलोम।

गोपो माली तथा तैली तन्त्री मोदक बारजी ।
कुलालः कर्मकारश्च नापितो नवशायकाः ॥

पश्चिम की ओर कलु को तेली कहते हैं क्योंकि इन दोनों शब्दों का अर्थ एक ही है जान पड़ता है पश्चिम ही के लोगों की देखादेखी बंगालवाले भी तेलियों से घृणा करनेलगे हैं।

रानाघाट से पूर्व तीन कोस पर गौरांगपुर एक छोटा सा गांव है वहां बहुत दिन से एक बाजार लगता है जहां दूर २ के लोग सौदा करने आते हैं। रामसराम भी पान बेंचने आया करते थे और जो कुछ मिलता था उसी से घर का काम चलाते थे कृष्णचंद्र इन के लड़के अपने भाइयों और साथियों के संग खेलते खाते रहते थे और कभी २ बाप के साथ बाजार भी जाते थे तथा बढ़ने पर वही धंधा भी करते थे।

तब तक रानाघाट के पासवाले कुमारखालि के कृपारामदत्त और दैयपुरवाले आदिराम बनुरजी से मेल बढ़ाकर रोजगार करनेलगे कृपाराम की अवस्था भी बड़ी थी और धन भी अधिक था एक बैल भी था उसी पर सौदा सुलुफ लाते थे और कृष्ण तथा आदिराम अपनी २ पीठ पर लाद लाते थे यह तीनों जने आसपास के सात बाजारों में जाते थे। सब ने साझा करके कई एक बैल खरीदे रानाघाट से दक्षिण छः कोस पर कायथ-पाड़ा नाम का एक छोटा सा गांव है उस में कई एक नसछोटा तेली रहते हैं वे बैलों के चालान का रोजगार करते हैं कृष्णचंद्र ने भी इन के साथ वही धंधा आरंभ किया जहां कोई वस्तु सस्ती सुनते थे वहां से खरीद कर बैल पर लाद लाते थे और जहां वह मंहगी बिकती थी वहां जाकर बेंच डालते थे इस रीति से कुछ दिन गेहूं चावल मोठ मटर आदि बेचबांच कर थोड़ा सा धन एकत्र कर लिया। फिर तो इन की भाग्य के वृक्ष में ऐसे फल लगने का आरंभ हुआ जैसी की आशा भी न थी। ११८६ हिजरी (१७८० ई०) में कलकत्ते में चनाका भाव बड़ा तेज हुआ इस से बहुत से व्यापारी चारों ओर उस की खरीद के लिए चलदिए इन्हीं में से एक महाजन नाव के द्वारा चूर्णी- नदी पर जाता हुआ रानाघाट के उसी स्थान पर आ पहुंचा जहां कृष्णपांती स्नानादिक कर रहे थे इन्हों ने महाजन से पूछा--आप कहां से आए हैं ? प्रयोजन क्या है और कहां जाइएगा ?

उसने कहा—आप तो कलकत्ता से हैं पर अब नहीं बतला सकते कि कहां जायेंगे जहां माल मिलेगा वहीं जाना होगा—ऐसी २ बातों से सब ब्यौरा जानकर कृष्णचंद्र ने कहा—जो आप हमारे साथ लिखा पढ़ी कर दें तो हम चने की खरीद कर सकते हैं—महाजन ने लिख दिया यह सौदापत्र लेकर चल दिये ।

आड़घाटा में जुगुलकिशोर नामक ठाकुर जी हैं। उन के नाम पर राजा कृष्णचंद्र ने बहुत सी सम्पत्ति लगा रक्खी थी इस से भगवानके भोग राग और साधु संतों की सेवा होने पर भी बहुत सा रुपया बचता था और मंदिर के महंत रोजगार व्यवहार के द्वारा और भी आय की वृद्धि करते रहते थे। महंत जी का नाम गंगाराम था उन्हों ने एक बार देखा कि घुन लगने से बहुत से चने नष्ट हो रहे हैं इस से एक सेवक से कहा कि अब यह सब बिगड़ जायेंगे इस से जो कोई किसी भाव मांगे तो दे देना चाहिए—इसी अवसर पर कृष्णचन्द्र भी वहां पहुंच गए और महंत जी का अभिप्राय जान कर बोले कि—मैं गरीब आदमी हूं जो आप मुझे बिकजाने पर रुपया लेने की शर्त पर चने बेच दें तो बड़ी दया होगी—महंत ने बहुत सस्ते भाव बेंच देना स्वीकार करलिया कृष्णचन्द्र ने महंत जी के चरण पर एक रुपया रखकर और चने का नमूना लेकर रानाघाट में बैपारी को जा दिखाया और भाव ठहराने की बात बैपारी ने तीन प्रकार का भाव ठहराया अच्छा चना जो महंत ने बारह आने मन के भाव दिया था वह दो रुपए मन तथा जो कुछ मध्यम था वह डेढ़ रुपये मन और जो निरा खोखला था सो छः आने मन पर ठहरा लिया बयाने का रुपया और लिखा पढ़ी हो गई और माल नावों पर लद आया हिसाब करने पर सब के दाम तेरह हजार आठ सौ पचहत्तर रुपये हुए सो देकर बैपारी चला गया इस सौदे में कृष्णचन्द्र को जो नफा हुई उस का हाल महंत को कुछ भी न खुला पर पाठकों को हम विदित करते हैं ।

अच्छा चना* ... ... २०००) × ३) = ६०००)
मध्यम ... ... ५,०००) × १॥) = ७५००)
खोखला ... ... १०००) × ।≠) = ३७५)

१३८७५)

महंत को मिला—६१२५)

कृष्णकान्त को नफ़ा = ७७५०)

उत्तम मध्यम चना ... ८०००)० × ॥) = ६०००)
भूसी ... ... १०००)० × ≠) = १२५)

६१२५

इन के विषय में एक कथा लोग यों भी कहते हैं पर कहानी ही जान पड़ती है कि एक दिन यह प्रातः काल चूर्णी नदी में हाथ मुंह धो रहे थे वहां एक बड़ी सुन्दर स्त्री से भेंट हुई और उसी समय नदी में सात घड़े बहते हुए दिखाई दिए जिन के मुंह बन्द थे स्त्री ने इन से कहा इन घड़ों को निकाल लो इस पर यह जल में पैठे तो छः घड़े डूब गए केवल एक हाथ लगा उसे लाकर घर में देखा तो धन भरा हुआ था ।

रुपया पाने पर कृष्णचंद्र की रुचि साधारण धंधे में न रही इस से कलकत्ते जाकर हाटखोला में एक घर बना कर रहनेलगे और व्यवसायियों से मेलजोल बढ़ा के रोजगार की चिंता करनेलगे तद्वारा विदित हुआ कि कम्पनी से लेकर नमक बेंचा जाय तो बड़ा लाभ हो सकता है इस से इन्हों ने कई एक महाजनों के साझे में कुछ दिन लवण का व्यापार किया । फिर साझियों से अलग हो कर अकेले धंधा करनेलगे इस में लोग कहते हैं तीस सहस्र मुनाफ़ा हुआ और बड़े महाजनों में

---

* राणाघाट निवासी जयगोपाल मजुमदार का लिखा हुआ 'राणाघाटविवरण' है उसी में यह हिसाब लिखा हुआ है और जयचन्द्रपाल चौधरी लिखते हैं कि महंत ने कृष्णचन्द्र को दया के मारे पहिले तीस रुपए का चना दिया था उसे बेंच कर रुपया अदा करके फिर इन्हों ने चना लिया इसी प्रकार होते २ धन की वृद्धि हो गई ।

गिने जानेलगे धर्म से व्यवहार करते थे इस से बहुत ही थोड़े दिन में लाभ का छोर न रहा साल्टबोर्ड के अफसर पर इनका ऐसा प्रभाव पड़ा कि इन के बिना किसी को नोन मिलता ही न था यह न होतेथे तो नीलाम बंद रहता था * होते २ यहां तक हुआ कि नीलाम के समय इन से अधिक कोई खरीद ही न सकता था। सब व्यापारी और नमक की कोठी के अधिकारी तथा कर्मचारी मानो इन के वशीभूत होगए और यह कलकत्ते के महाजनों में सब के शिरोमणि समझे जानेलगे। कलकत्ते में ऐसा कोई न था जो इन्हें न जानता हो साधारण दुकानदार से लेकर गवर्नर जनरल तक इन्हें धनी और प्रधान महाजन समझते थे।

कुछ दिन पहिले अपने संझले भाई शंभुचंद्र की सम्मति से इन्हों ने बहुत सा तअल्लुका खरीदा था फिर सं० १२०१ हिजरी (१७८४ ई०) में सामजी-यान परगना इजारे लिया और १२०२ हिजरी में हेते परगना खरीदा तथा १२०२ और १२०६ हिजरी (१७८५ और १७८९ ई०) में संतोर परगना लिया और इन्हीं दिनों हलदा का परगना भी खरीदा। इनका जैसा सम्मान साल्ट-बोर्ड में था वैसाही रैविन्यू बोर्ड में भी था यह देख कर कई अमीर इन का डाह करने लगे। संतोर के नीलाम के समय इन की बोली बढ़ादी और मैले कपड़ेवाला बेनी कहकर अपमान भी किया तब इन्हों ने रैविन्यू के अफसर से कहा कि इनलोगों से हमारी बोली के—हजार रुपए अधिक मान लीजिए—फिर क्या था सब के सब चुप हो गए। इस कथानक से लोग समझ सकते हैं कि इन के सामने अमीरी का दावा कोई कहां तक कर सकता था।

रानाघाट १२०६ हिजरी में खरीदा। पहिले यह कृष्णनगर के राजवंश के अधिकार में था इनका भाग ऐसा जगा हुआ था कि—जिधर जाते थे जय लाभ करते थे। जमींदारी में भी बड़ीही वृद्धि हुई। इनके पिता सहस्राम के समय वाले घर का चिन्ह भी न रहा वह चूर्णीनदी के उस पार समभूमि बन गई

---

* उन दिनों नमक थोक नीलाम के द्वारा बिकता था तौल या दर कुछ न थी वहां सब खरीददार तो बिछाई पर बैठते थे किंतु इन्हें सेक्रेटरी के सामने कुरसी मिलती थी।

है। अब महल, बाग, घुड़साल, गोशाला आदि सभी ऊंचे से ऊंचे बन गए महोत्सववाड़ी * गुंजबाटी सभी अलग २ तैयार हो गई। हाथी घोड़ा नौका आदि सभी अमीरी के ठाठ होगए। पूजा पाठ दान ध्यानादि भी बड़े उत्साह से होने लगे राजगुणधारी शंभुचंद्र जमींदारी का प्रबंध करते थे और पाल चौधरी कहाते थे दान के लोभ से दूर २ के ब्राह्मण राणा घाट में आबसे कहां तक कहिए कृष्णपांती के धन संपत्ति की सीमा न रही।

इन की उन्नति के समय कृष्णनगर के राजालोग इन से रुपया लेते थे इस उपकार के पलटे में महाराज शिवचन्द्र ने इन्हें चौधरी की पदवी दी क्योंकि उन दिनों यह पदवी बड़ी ही प्रतिष्ठित थी इस के प्राप्त होने पर कृष्णपांती के मान संभ्रम की सीमा न रही। लोग कहते हैं कि एक बार लार्ड मयरा दौरा करते हुए राणाघाट में ठहरे वहां इन्हों ने मुलाकात की लाट साहब ने बड़ा आदर किया और राजा का पद देना चाहा पर उस समय अंगरेजों का बहुत सन्मान न था इन्हों ने कहा कि जब नवद्वीपाधिपति चौधरी का पद दे चुके हैं तो हमें राजा कहलाने का क्या प्रयोजन है ? इस के पूर्व इन की जातीयउपाधि पाल थी इस से अब यह पाल चौधरी कहलाए और राजाओं की भांति नौबत आसा बल्लम आदि का व्यवहार इन के यहां भी होने लगा सर्कारी दफ़तर में भी इस प्रकार की प्रतिष्ठा लिख गई।

लोग कहते हैं नमक की कोठियों में जब आधिक आय का रुपया आता था तो एक घर में ढेर कर दिया जाता था और कुटुम्बियों से अपने २ अंश का धन ले लेने को कह दिया जाता था लोग गिन कर न लेते थे कोई टोकड़ी भर कोई और अधिक ले लेता था फिर जो बचता था धनागार में उठ जाता था।

रुपया ऐसा पदार्थ है कि बड़े बड़ों का स्वभाव पलट देता है कहते हैं एक बार इन पर भी उस का असर हो गया था अर्थात् इन्हों ने सालह्

* जिस घर में नाच रास दुर्गापूजा आदि होती है उसे गुंजबाटी कहते हैं श्रीगोपालकृष्णपाल चौधरी का खजाना इन दिनों जिस घर में है वह कृष्णपांती की गुंजबाटी थी और जिस में उमेशचंद्र के लड़के बाले रहते हैं वह महोत्सव बाटी थी तथा ब्रजनाथपाल चौधरी जिस में हैं वह उन के रहने का मकान था।

बोर्ड के साहिबों का तथा बाजारवालों का अपने ऊपर विश्वास देख कर लवण चुराना और भद्रेश्वर, कालना, हांसखाली, ढाका, मुरशिदाबाद, नारायणगंज, सिराजगंज, नलहाटी, पटना, कांचननगरादि में भेजना आरंभ कर दिया और उक्तस्थानों से नाना भांति की वस्तु मंगा कर कलकत्ते में बेंचने लगे इस रीति से भी बहुत कुछ धन लाभ किया एक बार चोरी खुल-गई तो नाव का तख़ता खोल कर नमक पानी में डुबवा दिया इस से बच गए। लोगों का कथन है कि यह काम आरम्भ करने के पहिले इन्हों ने नमक की कोठी के साहब को एक लाख रुपया दिया था। उन के विभव की जो कथा सुनते हैं उस से यह आश्चर्य्य नहीं है उन्नति के समय में यह लाख रुपया को सामान्य समझते थे। वह पढ़ना लिखना न जानते थे पर स्मरण शक्ति में इतना अभ्यास था कि बड़े २ हिसाब कर लेते थे कभी २ कर्मचारियों की भूल भी सुधार देते थे।

इन्हों ने देश का उपकार भी बहुत किया था किसी को राजकार्य में नियत करा के किसी को रोजगार से लगा के किसी को रुपया दे के सहायता करते थे इन के साहाय्य से अनेक लोग धनी हो गए थे राणाघाट में तीन चौथाई लोग इन्हीं के बनाए अमीर हैं केवल राणा ही घाट क्यों बरन जिस ने इन की छांहकू ली वही चार पांच पीढ़ी के निर्वाह भर को कमा लेता था।

मनुष्य की पहिचान इन्हें बहुत ही अच्छी थी इस विषय में एक गल्प प्रसिद्ध है कि राणाघाट से दक्षिण दो कोस पर जो वैद्यपुर नामक ग्राम है वहां यह तालाब बनवाते थे यह रीति है कि पहिले दो फावड़े तालाब खुदवानेवाला चलाता है तदनुसार खोदने गए थे बहुत लोग साथ थे उस समय तालाब का क्षेत्रफल निकालने का काम पड़ा तो इन के साथियों में से ठीक हिसाब न लगा पर वहां एक ब्राह्मण हाथ में लोटा लिए खड़े थे उन्हीं ने बहुत अच्छी तरह लेखा कर दिया इस पर कृष्णपांती बड़े प्रसन्न हुए और उन का हाल पूछ कर राणाघाट आने को कह गए। जब वह ब्राह्मण वहां आए तो इन्हों ने उन को अपने दीवान के पद पर नियुक्त कर लिया पहिले वह चार रुपए महीने के मुनीम थे पर राणाघाट में दीवान बाड़ुय कहलाने लगे और पाल चौधरी के यहां बड़ी योग्यता से सरिश्ते का

का हिसाब और ज़मीदारी का लिखाजोखा रखनेलगे उस दीवान साहब का नाम रामचन्द्र बन्द्योपाध्याय था और उस आदिराम के पुत्र थे जिन से पहिले कृष्णपांतीकी मित्रता और साझा था जान पड़ता है कृष्णपांती ने उन के पिता की मित्रता ही को स्मरण कर के यह पद प्रदान किया था नहीं तो एक तालाब का कीचड़मल निकालनेवाले को इतना बड़ा काम कौन सौंप देता है? दीवान रामचंद्र बनरजी उन्नत अवस्था में बड़े अहंकारी हो गए थे।

कृष्णपांती जैसा कहते थे वैसा ही करते भी थे इन का यह गुण इतना प्रसिद्ध हो गया था कि चोर डकैत तक इन की बात का विश्वास कर लेते थे। एक बार यह नाव पर चढ़े कलकत्ता में बाणाघाट आ रहे थे मार्ग में कईएक डकैतों ने घेर लिया और नाव पर लूट मार करनेलगे तब कृष्ण-पांती ने उन से कहा कि—इस समय चलेजाव हमारे घर आना तो हम तुम्हें खुश कर देंगे यह सुनते ही सब लोग चलेगए पर पीछे से बाणाघाट में आए तो इन्हों ने उन को जितना रुपया देने कहा था दे कर बिदा किया। एक बार एक ब्राह्मण से कहा था कि एक तअल्लुका मोल ले देंगे तदनु-सार जब अवसर पाया तब अपना बचन निभाया लड़कों ने यह भी कहा कि—इस तअल्लुके की आमदनी बहुत है दूसरे को दे देना ठीक नहीं— इस पर आप ने विरक्त भाव से उत्तर दिया— कुछ हो हम देने कह चुके हैं तो देंगे—यह कह कर जो कहा था वही किया भी। जिन्हें वह तअल्लुका दिया था वह ब्राह्मण श्रीरनगर वाले बाबू श्यामनदास के पितामह महादेव मुखोपाध्याय थे। एक दिन कोई पुरुष इन के यहां बहुत सा लवण खरीदने के लिए बैयाना दे गया था पर रुपए का ठीक न लगा इस से न लोन लेने आया न बयाना फेरने। इन के कुछ दिन पीछे नमक का भाव बहुत चढ़ गया तो कृष्णचंद्र ने सब बैचडाला पर जितने का वह मनुष्य बैयाना दे गया था उतने नमक का मुनाफ़ा उसी के नाम से जमा कर रक्खा और बहुत दिन पी जब भेंट हुई तो मुनाफ़े का रुपया देदिया। सन् १२१२ हिजरी (१८०५ ई०) में महाराज कृष्णचन्द्र राय के मझले बेटे शंभुचन्द्र का नदिया के राजा ईश्वरचन्द्र से मुकद्दमा लगा था उस में रुपए की आवश्यकता के कारण

शंभुचंद्र राय ने कहा कि कुछ रुपया दीजिए मुकद्दमा फैसल होने पर फेर लीजिएगा यह आंखों की सील से ईश्वरचंद्र ने स्वीकार कर के कहा कि—किसी भला मानस को जामिन होना चाहिए—उस समय शंभुचंद्र जी ने कृष्णपांती को जामिन ठहराया कृष्णपांती ने जमानत स्वीकार भी कर ली। पीछे से ईश्वरचंद्र ने इन से कहा कि आप जामिन न हों—तो कृष्णपांती ने उत्तर दिया—थूक कर चाटना भले मानस का काम नहीं है जो कहा वह कह दिया—इस पर जब कृष्णपांती जमानत नामा पर हस्ताक्षर करने के लिए कृष्णनगर आए तब ईश्वरचंद्र ने इन का अपमान करना चाहा पर कुछ न कर सके। जब जज साहब ने इन से दस्तखत करने कहा तो यह बोले कि—हमारे अक्षर ठीक नहीं होते इस से हमारे दीवान जी दस्तखत कर देंगे—यह बात सुन कर जज साहब आश्चर्य से इन की ओर देखने लगे और समझ गए कि विद्या और वस्तु है और कार्य कुशलता तथा सद्गुण और ही बात है। जिन कृष्णपालचौधरी की क्षमता से नदिया की राजसम्पत्ति राणाघाट में जा विराजी थी उन्हें अपना नाम भी नहीं लिखने आता।

एक बार एक अंगरेज सौदागर ने इन से चावल खरीदना चाहा उन दिनों चावल बहुत सस्ता था पर दो ही तीन मास में भाव चढ़ गया किन्तु कृष्णपांती ने उसी पुराने भाव से तोल दिया जब चावल जहाज पर लदने लगा तो साहब ने अपने नौकरों से कहा—देखो! ऐसे सच्चे आदमी का माल बहुत न लेना नहीं जहाज डूब जायगा।

कृष्णपांती कृतज्ञ भी बड़े थे लड़कपन में जब अपने भाई शंभुचंद्र के साथ गांनापुर के हाट में जाया करते थे उन दिनों एक दरिद्र ब्राह्मण इन पर बड़ी दया रखते थे कभी २ भातदाल भी खिलादेते थे इस से इन का श्रम दूर होजाता था अब वृद्धि के समय यह एक दिन अपने द्वार पर बैठे थे इतने में एक ब्राह्मण को दुःखी सा देख कर उस की दशा पूछी तो उस ने कहा कि हमारी कुछ धरती चौधरी की सरकार में कुर्क हो गई है—इस पर इन्हों ने इस के पिता का नाम और ग्राम स्थानादि पूछ कर खड़े हो के कहा—मेरे संग चलिए—वह चल दिया तो आप सदर कचहरी में ले गए इन्हें आते देख कर सबलोग खड़े होगए तब इन्हों ने आंसू भर कर

शम्भुचन्द्र से कहा—शम्भू ! क्या तुम इन के यहां का भात भूल गए ? धिक् —यह सुन कर शंभुचंद्र ने पता पूछा तो जाना कि यह उन्हीं ब्राह्मण के पुत्र हैं जो गांनापुर में रहते थे बस इस पर उन की सारी भूमि लौटाल दी।

पहिले गरीबी भोग कर फिर अमीर होने पर बहुतेरे घमंडी हो जाते हैं पर यह ऐसे न थे सदा साधारण कपड़ा पहिनते थे साधारण ही आहार करते थे और बेंचने की चीज़ों का नमूना ले के हाट बाजार जाते थे निज के काम में नौकरों की राह न देखते थे बाबू बनना पसंद न करते थे एक बार गाड़ू लिए कहीं जाते थे यह देख के शंभुचंद्र ने सेवक को भेजा कि उन के हाथ से ले ले, इस पर इन्हों ने भाई पर विरक्त होकर सेवक को लौटाल दिया।

जैसी इन की प्रतिष्ठा थी वैसा रूप न था लंबा दुबला और काला शरीर देख कर कोई यह न जान सकता था कि कृष्णपांती यही हैं यह एक बार गंगातटवाली हाट में फिर रहे थे वहां बहुत सी नावें लगी हुई थीं और महाजन तथा मांझीलोग इधर उधर घूम रहे थे उन में से एक महाजन से पूछा कि—नाव में कितना माल है और दर क्या है ?—उस ने हंसी की रीति से माल और भाव बहुत घटा कर बतला दिया तो यह बैयाना दे कर चले आए पीछे से जब उस ने जाना कि बाजार के स्वामी वही थे जो बैयाना दे गए हैं तो मारे डर के रोने और कांपनेलगा औ बहुत लोगों के साथ जाकर बड़ी खुशामद से बयाना फेर आया।

यह कभी झूठ न बोलते थे और अपने धर्म पर बड़ी श्रद्धा रखते थे एक बार किसी ने अपने मुकद्दमे में इन्हें गवाह किया था तो इन्हों ने अदालत में जा के कह दिया था कि फर्यादी का रुपया सच्चा है वह हम दे देंगे पर हलफ न उठावेंगे चाहे सच्ची हो चाहे झूठी—इस पर विचारकर्ता को बड़ा विस्मय हुआ औ उस ने प्रचार कर दिया कि कोई कृष्णपांती को साक्षी न ठहराया करे।

यह सब काम में धन की हानि लाभ का विचार भी रखते थे एक बार जयराम न्याय पंचानन से पूछा कि—पढ़ाने में आप को कितना धन प्राप्त होता है ? उन्हों ने अपने स्वल्प आय की कथा और कष्ट का वृत्तांत कह सुनाया तो इन्हों ने कहा—यह काम छोड़ दीजिए कोई व्यवसाय कीजिए जिस में लाभ हो रुपया हम देंगे।

एक बार पूजा के समय जिस दिन आने की बातचीत थी उस दिन न आकर दूसरे दिन घर आए लोगों ने विलंब का कारण पूछा तो इन्हों ने बताया कि रोजगार में लाख रुपया कमा के रख आए हैं इसी से देर हो गई खेद का विषय है कि रुपया तो इतना था पर सर्व साधारण के उपकार योग्यस्थायी कीर्ति का चिन्ह केवल एक तालाब ही देखने में आता है हां एक बार मद्रास में अकाल पड़ा था तब अवश्य इन्हों ने एक लाख रुपए के चावल दिए थे और रामदुलाल सर्कार ने एक लाख नगद भेजा था।

नीचे लिखी कथा से विदित हो जायगा कि जब इन के पास बहुत सुभीता न था तब भी अतिथि का आदर कैसा करते थे पिता के मरने के उपरांत एक दिन गंगापुर की हाट को जानेवाले थे इस से तड़के ही स्नान करने को जा रहे थे मार्ग में एक बुढ़िया ने पूछा कि बच्चा कृष्णपांती का घर कहां है मैं वहां आज ठहरूंगी—इन्हों ने बड़े आदर से उसे घर बतलाया और शीघ्र ही स्नान कर के घर आकर मा से पूछा कि—बुढ़िया माई कहां ठहरी हैं—मां ने बता दिया तो वहां जा के देखा कि केवल धूप गूगुल महक रहा है पर है कोई भी नहीं। यह देख कर इन्हें अचंभा हुआ और माता से यह कह कर बाज़ार चले गए कि घर में कोई गड़बड़ न होने पावे लोग कहते हैं कि उसी दिन से उन की उन्नति का आरंभ हुआ था पर जैसी अतिथि सेवा हीनावस्था में थी वैसी ही उन्नत दशा में भी थी इस का कोई प्रमाण नहीं मिलता। क्योंकि उन के वंशवाले राणाघाट के पालचौधरियों में किसी के यहां कोई आतिथ्य का पक्का प्रबंध देखने में नहीं आता *।

कहते हैं कि इन की मा ने रोज़गार करने को एक अठन्नी दी थी उसी से इन्हों ने इतना धन कमाया इस कारण लोग इन को अठन्नी वाले अमीर कहते थे कामों से जान पड़ता है कि यह हिसाबी भी बड़े थे पाठक गण! यदि तुम्हें यह जानने की इच्छा हो कि सौभाग्य क्या है। यदि इस कहावत का प्रत्यक्ष उदाहरण देखने की मनोगति हो कि "मट्टी छूते सोना होता है" तो कृष्ण पांती का चरित्र पढ़ो॥

---

* सं० १२८१ हिजरी में राणाघाट के प्रसिद्ध सदाव्रती वासुदेव के साथ भेद होने पर पालचौधरी के एक वंशज महाशय ने अति थैशाला बनाई थी।

एक बार इन के वंश के किसी पुरुष ने बहुत सा गुड़ खरीदा था पर पीछे से भाव घट गये इस से उसे बड़ी उदासी हुई यह समाचार पाकर उस से कहा कि जिस भाव खरीदा है उसी भाव हमारे हाथ बेंच दो उस ने यह भी बहुत उत्तम समझ कर बेंच डाला वही गुड़ कलकत्ता में भेज कर कृष्ण पांती ने बड़े मुनाफे से बेंचा।

इन का जीवनचरित्र बड़ाही मनोहर है पर पूरा लिखा जाय तो बड़ी सी पुस्तक बने इस से यहीं समाप्त करते हैं इन की मृत्यु १८०८ ई० १२१६ हिजरी में साठ वर्ष की अवस्था में हुई थी यह पढ़े लिखे न थे तौभी मूर्ख न थे।

जो लोग आज कल नदिया ज़िला के सब से बड़े ज़मींदार हैं जिन के घर बार बाग बगीचे इन्द्रपुरी की समता करते हैं जिन के ठाठ बाट राजाओं के से हैं और पांच पीढ़ी तक अपना धन लुटाते रहें तौ भी अमीर ही रह सकते हैं उन बाबुओं के पुरखा यही कृष्णपांती थे और किसी समय रूखा सूखा खाके पेट भरते और सिर पर पान लाद कर बाज़ार में बेंचने जाते थे जो बैल पर चने लाद के देश २ में फिरते थे और बालों में धूल भरे मैले वस्त्र पहिने रहा करते थे उन्हीं कृष्णपांती के परिश्रम सहनशीलता उत्साह बुद्धिमानी और सच्चाई से उन के वंशवाले पालचौधरियों की यह वृद्धि देखने में आती है।

कृष्णपांती के दो स्त्रियां थीं उन से प्रेमचंद, ईश्वर, उमेश और रामरत्न नामक चार पुत्र हुए थे और इन के भाई शंभुचन्द्र के वैकुंठ और काशीनाथ थे उन में से रामरत्न के लड़के बाले न थे शेष पांच भाइयों से राणाघाट के पालचौधरियों का वृहद्वंश चला है।

राजारामयोहन राय।

यह सन् ११८१ सन हिजरी अर्थात् १७७४ ई० में बर्दमान ज़िले के राधा-नगर (इन दिनों हुगली के ज़िले में है) के मध्य एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण के घर में उत्पन्न हुए थे—इन के पिता रामकांतराय इस नगर के प्राचीन निवासी न थे यवन राजाओं के, उपद्रव वश मुर्शिदाबाद से भाग कर यहां आ बसे थे क्योंकि यह ज़िला उत्तम था और यहां इन की पैतृक भूमि भी थी इसका

पूर्व वासस्थान मुर्शिदाबाद भी न था पर इन के पिता किसी सरकारी नौकरी के कारण आ रहे थे। राममोहनराय के पूर्व पुरुषों का व्यवसाय धर्म शिक्षा करना मात्र था पर जब औरंगज़ेब बादशाह ने हिंदुओं के धर्म द्वेष आरम्भ किया तब इन के अति वृद्धप्रपितामह अपना व्यवसाय त्याग के नौकरी करने लगे तब से बराबर सब नौकरी ही करते रहे पर छटी पीढ़ी में राम-मोहन ने जन्म लिया तो नौकरी क्या कर्मस्थान तक को छोड़ दिया। इन्हों ने जीवनचरित्र में लिखा है कि—हमारे वंश में एक सौ चालीस वर्ष तक नौकरी का धंधा किया गया।

हे बालको! यह न समझना कि साधारण पाठशाला में पढ़ने से कोई असाधारण पुरुष नहीं होता—बड़प्पन केवल अपने परिश्रम और प्रयत्न से प्राप्त होता है। राममोहनराय पहिले गुरू जी (भैया जी) की चटसाल में पढ़ने को बैठाले गए पुराने समय की बातें जाने दो भैया जी आज भी कैसे विद्वान और बुद्धिमान होते हैं वह किसी से छिपा नहीं है पर राममोहनराय की बुद्धि ने वहीं से अपना प्रकाश आरम्भ कर दिया बंगभाषा इन्हों ने चट-साल ही में पढ़ डाली। बंगला की जैसी उन्नति आजकल है वैसी उस काल में न थी थोड़े से पंडितों को छोड़कर यह भाषा कोई शुद्ध बोलना व लिखना भी न जानता था ऐसे समय में उत्पन्न होके इन्हों ने बंगभाषा को उत्तम रूप से पढ़ा था और उस में ग्रन्थ रचना भी की थी इस बात के लिए राममोहनराय को सैकड़ों धन्यवाद मिलने चाहिए। बंगला सीखने के उप-रांत अरबी फ़ारसी पढ़ने के लिए पटना भेजे गए जैसी प्रतिष्ठा आज दिन अंगरेज़ी की है वैसीही उस समय फ़ारसी अरबी की थी इन्हों ने थोड़ेही दिन में उन भाषाओं के मुख्य २ ग्रन्थ तथा उन में अनुवादित यूनानी के भी कई पुस्तक पढ़ लिए विशेषतः रेखागणित और तर्कशास्त्र में तो बहुतही अच्छा श्रम किया फिर कुरआन और हदीस में ऐसा अभ्यास किया कि अंत को उन का जी मूर्तिपूजा से हट गया और यही बात इन की प्रसिद्धी का कारण हुई इस के पीछे संस्कृत पढ़ने के लिए बनारस * (काशी) जी गए उस का भी

* वाराणसी का अपभ्रंश बनारस है बहुत लोग ऐसा कहते हैं कि रिषी

थोड़े दिन के परिश्रम से अच्छा अभ्यास करलिया और विश्वास जमालिया कि जिस मत को हम मानते हैं वही वेद पुराणादि में भी प्रतिपादित है वहां से

समय में यहां का बड़ा प्रतापी बनार नाम का राजा हुआ इसी के समय से इस का नाम बनारस पड़ा । वे लोग बनार ही का बनाया राजघाट कहते हैं । पुराणों में लिखा है कि वरणा और असी इन दोनों नदियों के बीच जो नगरी हो उसे वाराणसी कहना । परन्तु भट्टोजी दीक्षित जिन की बनाई व्याकरण में सिद्धान्त-कौमुदी है लिखते हैं कि वर, श्रेष्ठ जो अनस, जल सो कहावे वरानस् अर्थात् गङ्गाजल उस गङ्गाजल के समीप में जो नगरी हो उसे वाराणसी कहना । संस्कृत में इस के वाराणसी, कैलाशपुरी, विश्वनाथनगरी, काशी, शिवपुरी इत्यादि अनेक नाम हैं । मुसल्मान इसे मुहम्मदाबाद कहते हैं । इस में अनुमान से २००००० मनुष्य इस समय में बसते हैं । काशी संस्कृतविद्या की प्रधान नगरी है भागवत में लिखा है कि काशी ही के सांदीपिनि ऋषि से राम और कृष्ण ने विद्या को पढ़ा । इस समय में भी कलकत्ता, बम्बई, लाहोर इत्यादि नगरों में जो विशेष प्रतिष्ठित पण्डित वर्त्तमान हैं वे सब प्रायः काशी ही के पढ़े हुये हैं । यहां पर सब से प्रधान विश्वनाथ का स्वर्णमन्दिर है । जिसे आजकल आदिवि-श्वेश्वर कहते हैं वही पहले विश्वनाथ का मुख्य मन्दिर था । जब अलाउद्दीन खिलजी ने इस को तोड़वा डाला तब नारायण भट्ट के उद्योग से नगरवासियों ने ज्ञानवापी के पास नया विश्वनाथ का मन्दिर बनाया । औरंगजेब ने जब इसे भी तोड़ा तब यह वर्त्तमान स्वर्णमन्दिर बनाया गया । प्रथम यह मन्दिर पत्थर का था पश्चात् लाहोर के राजा ने इस के ऊपर सुवर्ण चढ़वा दिया । काशी जी में गङ्गा के घाट बड़े मनोहर बने हुये हैं । दशाश्वमेध घाट के निकट ही जयपुर के राजा जयसिंह की आज्ञा से जगन्नाथ पण्डित के बनवाये याम्योत्तर, दिगंश, चक्र, नाड़ीवलय, वा सम्राट् यन्त्र अब भी उन के पाण्डित्य को प्रकाश कर रहे हैं । छत के झुकजाने से ये यन्त्र अब ठीक ठीक अपनी दिशा में नहीं हैं इसलिये ज्योतिषी इन से ग्रहों को वेधकर अब कुछ भी नहीं निकाल सकता । बिन्दुमाधव के मन्दिर को तोड़कर औरंगजेब ने जो पञ्चगङ्गा घाट पर मसजिद बनवाई है उस की दोनों शिखर गङ्गा के तट से अनुमान से १०० फुट ऊंचे हैं इन शिखरों पर चढ़ने से नगर की विलक्षण शोभा देख पड़ती है । मणिकर्णिकाघाट से अनुमान तीन कोश उत्तर सारनाथ महादेव के पास ही बौद्धों के बनवाये उन के गुरुओं के दो स्तूप धामिकस्तूप ७४ हाथ वर्त्तमान हैं और

पूर्व वासस्थान मुर्शिदाबाद भी न था पर इन के पिता किसी सरकारी नौकरी के कारण वा रहे थे। राममोहनराय के पूर्व पुरुषों का व्यवसाय धर्म भिक्षा करना मात्र था पर जब औरंगजेब बादशाह ने हिंदुओं के धर्म द्वेष आरम्भ किया तब इन के अति वृद्धप्रपितामह अपना व्यवसाय त्याग के नौकरी करने लगे तब से बराबर सब नौकरी ही करते रहे पर छठी पीढ़ी में राम-मोहन ने जन्म लिया तो नौकरी क्या कर्मस्थान तक को छोड़ दिया। इन्हों ने जीवनचरित्र में लिखा है कि—हमारे वंश में एक सौ चालीस वर्ष तक नौकरी का धंधा किया गया।

हे बालको! यह न समझना कि साधारण पाठशाला में पढ़ने से कोई असाधारण पुरुष नहीं होता—बड़प्पन केवल अपने परिश्रम और प्रयत्न से प्राप्त होता है। राममोहनराय पहिले गुरू जी (भैया जी) की चटसाल में पढ़ने को बैठाले गए पुराने समय की बातें जाने दो भैया जी आज भी कैसे विद्वान और बुद्धिमान होते हैं वह किसी से छिपा नहीं है पर राममोहनराय की बुद्धि ने वहीं से अपना प्रकाश आरम्भ कर दिया बंगभाषा इन्हों ने चट-साल ही में पढ़ डाली। बंगला की जैसी उन्नति आजकल है वैसी उस काल में न थी थोड़े से पंडितों को छोड़कर यह भाषा कोई शुद्ध बोलना व लिखना भी न जानता था ऐसे समय में उत्पन्न होके इन्हीं ने बंगभाषा को उत्तम रूप से पढ़ा था और उस में ग्रन्थ रचना भी की थी इस बात के लिए राममोहनराय को सैकड़ों धन्यवाद मिलने चाहिए। बंगला सीखने के उप-रांत अरबी फारसी पढ़ने के लिए पटना भेजे गए जैसी प्रतिष्ठा आज दिन अंगरेज़ी की है वैसीही उस समय फारसी अरबी की थी इन्हीं ने थोड़ेही दिन में उन भाषाओं के मुख्य २ ग्रन्थ तथा उन में अनुवादित यूनानी के भी कई पुस्तक पढ़ लिए विशेषतः रेखागणित और तर्कशास्त्र में तो बहुतही अच्छा श्रम किया फिर कुरआन और हदीस में ऐसा अभ्यास किया कि अंत को उन का जी मूर्तिपूजा से हट गया और यही बात इन की प्रसिद्धी का कारण हुई इस के पीछे संस्कृत पढ़ने के लिए बनारस * (काशी) जी गए उस का भी

* वाराणसी का अपभ्रंश बनारस है बहुत लोग ऐसा कहते हैं कि किसी

थोड़े दिन के परिश्रम में अच्छा अभ्यास करलिया और विश्वास जमालिया कि जिस मत को हम मानते हैं वही वेद पुराणादि में भी प्रतिपादित है वहां के

समय में यहां का बड़ा प्रतापी बनार नाम का राजा हुआ उसी के समय से इस का नाम बनारस पड़ा। वे लोग बनार ही का बनाया राजघाट कहते हैं। पुराणों में लिखा है कि वरणा और असी इन दोनों नदियों के बीच जो नगरी हो उसे वाराणसी कहना। परन्तु भट्टोजी दीक्षित जिन की बनाई व्याकरण में सिद्धान्त-कौमुदी है लिखते हैं कि वर, श्रेष्ठ को अनस, जल भी कहावे वरानस् अर्थात् गङ्गाजल उस गङ्गाजल के समीप में जो नगरी हो उसे वाराणसी कहना। संस्कृत में इस के वाराणसी, कैलाशपुरी, विश्वनाथनगरी, काशी, शिवपुरी इत्यादि अनेक नाम हैं। मुसलमान इसे मुहम्मदाबाद कहते हैं। इस में अनुमान से २००००० मनुष्य इस समय में बसते हैं। काशी संस्कृतविद्या की प्रधान नगरी है भागवत में लिखा है कि काशी ही के सांदीपिनि ऋषि से राम और कृष्ण ने विद्या को पढ़ा। इस समय में भी कलकत्ता, बम्बई, लाहौर इत्यादि नगरों में जो विशेष प्रतिष्ठित पण्डित वर्तमान हैं वे सब प्रायः काशी ही के पढ़े हुये हैं। यहां पर सब से प्रधान विश्वनाथ का स्वर्णमन्दिर है। जिसे आजकल आदिविश्वेश्वर कहते हैं वही पहले विश्वनाथ का मुख्य मन्दिर था। जब अलाउद्दीन खिलजी ने इस को तोड़वा डाला तब नारायण भट्ट के महोद्योग से नगरवासियों ने ज्ञानवापी के पास नया विश्वनाथ का मन्दिर बनाया। औरंगजेब ने जब इसे भी तोड़ा तब यह वर्तमान स्वर्णमन्दिर बनाया गया। प्रथम वह मन्दिर पत्थर का था पश्चात् लाहौर के राजा ने इस के ऊपर सुवर्ण चढ़वा दिया। काशी जी में गङ्गा के घाट बड़े मनोहर बने हुये हैं। दशाश्वमेध घाट के निकट ही जयपुर के राजा जयसिंह की आज्ञा से जगन्नाथ पण्डित के बनवाये याम्योत्तर, दिगंश, चक्र, नाड़ीमण्डल, या सम्राट् यन्त्र अब भी उस के पाण्डित्य को प्रकाश कर रहे हैं। उन के [illegible] से ये यन्त्र अब ठीक ठीक अपनी दिशा में नहीं हैं इसलिये ज्योतिषी इन से ग्रहों को वेधकर अब कुछ भी नहीं निकाल सकता। बिन्दुमाधव के मन्दिर को तोड़कर औरंगजेब ने जो पञ्चगङ्गा घाट पर मसजिद बनवाई है उस के दोनों शिखर गङ्गा के घाट से अनुमान २४० फुट ऊंचे हैं इन शिखरों पर चढ़ने से नगर की विलक्षण शोभा देख पड़ती है। मणिकर्णिकाघाट से अनुमान तीन कोस उत्तर सारनाथ महादेव के पास ही बौद्धों के बनाये [illegible] हैं और

११८७ हिजरी (१७८० ई०) में अपने देश को लौट आए और सोलह वर्ष की अवस्था में—हिन्दुओं की पौत्तलिक धर्मप्रणाली नामक पुस्तक लिखी उसमें

उसी स्थान में एक पुराना ताल भी है। वहां के लोग समाधि को धमेख और ताल को नयी नरोखर चन्दा ताल कहते हैं। धमेख तो धर्मेण अर्थात् धर्ममृग का और नयी नरोखर चन्दा ताल, न्यायिनरेश्वरचन्द्र तड़ाग का अपभ्रंश जान पड़ता है। जिस नरेश्वर ने ताल को खोदवाया उस का नाम तो अनादर के भय से लोगों ने छोड़ दिया और आदर के लिये आदि में न्यायी विशेषण और अन्त में उस की पदवी चन्द्र जो कि बौद्धों में प्रसिद्ध है जोड़कर न्यायिनरेश्वरचन्द्रतड़ाग के स्थान में नई नरोखर चन्दा ताल पुकारने लगे। और बौद्धों के ग्रन्थों से जान पड़ता है कि उस समय में बौद्ध राजा के ओर से काशी में हरिणों को दाना मिला करता था इसी कारण इस स्थान का नाम धर्मेण वा धर्ममृग पड़ा हो जिस को अब लोग धमेख धमेख कहा करते हैं।

यहां गङ्गा जी में बुढ़वामङ्गल का मेला बड़ा प्रसिद्ध है। यह प्रायः वर्ष के अंत में जो मङ्गलवार पड़ता है उसी दिन होता है इसी लिये इस का नाम बुढ़-वामङ्गल पड़ा है। हमारे देशवासी आर्य जन जिस गङ्गा का इतना आदर करते हैं कि बिना जल को शिर पर चढ़ाये गङ्गा जी में पैर तक नहीं डालते उस विमल गङ्गाजल में यह मलमय मेलारूप अनर्थ भारतवासियों का किया हुआ कदापि न समझना चाहिये। मुझे तो मेले का मूल मीर साहब जान पड़ते हैं जो किसी समय में नव्वाब के ओर से काशी में प्रधान पुरुष थे और जिन का बंधवाया अब तक मीरघाट वर्तमान है। ऐसा सुना है कि नव्वाब के चित्तविनोदार्थ लखनऊ में जो गुलरेजी का मेला गोमती में हुआ करता था मीर साहब ने उसी की छाया को यहां पर फैलाया।

काशी में मरने से प्राणियों का पुनर्जन्म नहीं होता अर्थात् काशी में जो लोग मरते हैं उन की मुक्ति हो जाती है वे लोग पुनः संसार में दुःख भोगने के लिये नहीं आते साक्षात् शिवरूप हो जाते हैं यह समग्र पुराण धर्मशास्त्रादि का सिद्धांत है इसी लिये यहां वास करने के लिये अनेक देश के लोग आते हैं। यह अत्यन्त चमत्कार है कि यदि सब से प्राचीन वासियों का खोज किया जाय तो केदारेश्वर महादेव के निकट श्मशान का अधिकारी जो चाण्डाल है उसी के मूलपुरुष काशी में सब से प्राचीनवासी ठहरते हैं। (भाषाभाष्यक द्वितीय भाग से)

लिखा कि पौत्तलिक धर्म अच्छा नहीं है उसे छोड़ देना चाहिए यह पुस्तक प्रकाश होतेही चारों ओर से द्वेष की आग धधकने लगी पर इन्हों ने कुछ भय न किया यद्यपि इनके पिता ने इन्हें घर तक से निकाल दिया। घर से निकल कर यह भारत के बहुत स्थानों में फिरे और बहुत से मतों की देख भाल की तथा लोगों को अपने मत में लाने की भी चेष्टा करने लगे इन्हें सदा यही चिंता रहती थी कि सारा संसार ब्राह्मधर्म मानने लगे धर्म संस्कारकों के इन में सब गुण थे नाना देश और नाना ग्रन्थों का ज्ञान, साहस, दया, परिश्रम, सहनशीलता, सभी में चढ़े बढ़े थे।

भारत में भ्रमण करचुकने पर बौद्धधर्म का ज्ञान प्राप्त करने को तिब्बत देश में गए वहां देखा कि लोग कई मनुष्यों को देवता समझते हैं इस से बौद्धधर्म के दोष दिखाने और ब्राह्मधर्म का प्रचार करने में कटिबद्ध हुए इस में इन्हें कष्ट भी बहुत मिला लोगों ने अत्याचार किया सो सब सहना पड़ा यह दुःख सह कर अपने मत का उपदेश करने में अपनी शोभा समझते थे तिब्बत में यह जिस घर में रहते थे उस की कई स्त्रियां इन का पक्ष करती थीं और इन्हें कष्ट से बचाने में यत्नवान रहती थीं वहां से चार वर्ष के पीछे फिर हिन्दुस्थान आए और बाईस वर्ष की अवस्था में अंगरेज़ी पढ़ना आरंभ किया पर चित्त धर्म की चिंता में अधिक रहता था इस से इस भाषा के सीखने में बहुत दिन लगे किन्तु सीखा तो भी इतना कि अंगरेज़ी में कई एक बड़ी२ पुस्तकें लिखीं और बहुत से अंगरेज़ों के द्वारा प्रतिष्ठा पाई यह संस्कृत, अरबी, फारसी, बंगला, हिन्दी, इबरानी, ग्रीक, लैटिन, उरदू और अंगरेज़ी जानते थे तथा काम चलाने भर को और भी कई भाषाओं में बोध रखते थे।

१२१० हिजरी (१८०३ ई०) में इनके पिता का परलोकवास हुआ इस से कुटुंब की चिन्ता आ पड़ी पर पैतृक सम्पत्ति का तृतीयभाग जो इन्हें मिला था उस से निर्वाह न हो सका अतः रंगपुर की कलेक्टरी में काम करनेलगे। कलेक्टर डिग्बी साहब सज्जन और गुणग्राही थे इन का आदर करते थे और अंगरेज़ी में सहायता देते थे इस कारण राममोहन की उस भाषा में योग्यता और देशवासियों में बहुत प्रतिष्ठा होगई इस काम में इन्हों ने बहुत

(११८७ हिजरी (१७७० ई०) में अपने देश को लौट आए और सोलह वर्ष की अवस्था में—हिन्दुओं की पौत्तलिक धर्मप्रणाली नामक पुस्तक लिखी उसमें

उसी स्थान में एक पुराना ताल भी है। वहां के लोग समाधि को धमेख और ताल को नयी नरोखर चन्दा ताल कहते हैं। धमेख तो धर्मेण अर्थात् धर्ममृग का और नयी नरोखर चन्दा ताल, न्यायिनरेश्वरचन्द्र तड़ाग का अपभ्रंश जान पड़ता है। जिस नरेश्वर ने ताल को खोदवाया उस का नाम तो अनादर के भय से लोगों ने छोड़ दिया और आदर के लिये आदि में न्यायी विशेषण और अन्त में उस की पदवी चन्द्र जो कि बौद्धों में प्रसिद्ध है जोड़कर न्यायिनेश्वरचन्द्रतड़ाग के स्थान में नई नरोखर चन्दा ताल पुकारने लगे। और बौद्धों के ग्रन्थों से जान पड़ता है कि उस समय में बौद्ध राजा के ओर से काशी में हरिणों को दाना मिला करता था इसी कारण इस स्थान का नाम धर्मेण वा धर्ममृग पड़ा हो जिस को अब लोग धमेख धमेख कहा करते हैं।

यहां गङ्गा जी में बुढ़वामंगल का मेला बड़ा प्रसिद्ध है। यह प्रायः वर्ष के अंत में जो मङ्गलवार पड़ता है उसी दिन होता है इसी लिये इस का नाम बुढ़वामङ्गल पड़ा है। हमारे देशवासी आर्य जन जिस गङ्गा का इतना आदर करते हैं कि बिना जल को शिर पर चढ़ाये गङ्गा जी में पैर तक नहीं डालते उस विमल गङ्गाजल में यह मलमय मेलारूप अनर्थ भारतवासियों का किया हुआ कदापि न समझना चाहिये। मुझे तो मेले का मूल मीर साहब जान पड़ते हैं जो किसी समय में नव्वाब के ओर से काशी में प्रधान पुरुष थे और जिन का बंधवाया अब तक मीरघाट वर्तमान है। ऐसा सुना है कि नव्वाब के चित्तविनोदार्थ लखनऊ में जो गुलेंजी का मेला गोमती में हुआ करता था मीर साहब ने उसी की छाया को यहां पर फैलाया।

काशी में मरने से प्राणियों का पुनर्जन्म नहीं होता अर्थात् काशी में जो लोग मरते हैं उन की मुक्ति हो जाती है वे लोग पुनः संसार में दुःख भोगने के लिये नहीं आते साक्षात् शिवरूप हो जाते हैं यह समग्र पुराण धर्मशास्त्रादि का सिद्धांत है इसी लिये यहां वास करने के लिये अनेक देश के लोग आते हैं। यह अत्यन्त चमत्कार है कि यदि सब से प्राचीन वासियों का खोज किया जाय तो केदारेश्वर महादेव के निकट श्मशान का अधिकारी जो चाण्डाल है उसी के मूलपुरुष काशी में सब से प्राचीनवासी ठहरते हैं। (भाषाबोधक द्वितीय भाग से)

लिखा कि पौत्तलिक धर्म अच्छा नहीं है उसे छोड़ देना चाहए यह पुस्तक प्रकाश होतेही चारों ओर से द्वेष की आग धधकने लगी पर इन्होंने कुछ भय न किया यद्यपि इनके पिता ने इन्हें घर तक से निकाल दिया। घर से निकल कर यह भारत के बहुत स्थानों में फिरे और बहुत से मतों की देख भाल की तथा लोगों को अपने मत में लाने की भी चेष्टा करने लगे इन्हें सदा यही चिंता रहती थी कि सारा संसार ब्राह्मधर्म्म मानने लगे धर्म संस्कारकों के इन में सब गुण थे नाना देश और नाना ग्रन्थों का ज्ञान, साहस, दया, परिश्रम, सहनशीलता, सभी में चढ़े बढ़े थे।

भारत में भ्रमण करचुकने पर बौद्धधर्म का ज्ञान प्राप्त करने को तिब्बत देश में गए वहां देखा कि लोग कई मनुष्यों को देवता समझते हैं इस से बौद्धधर्म के दोष दिखाने और ब्राह्मधर्म का प्रचार करने में कटिबद्ध हुए इस में इन्हें कष्ट भी बहुत मिला लोगों ने अत्याचार किया सो सब सहना पड़ा यह दुःख सह कर अपने मत का उपदेश करने में अपनी शोभा समझते थे तिब्बत में यह जिस घर में रहते थे उस की कई स्त्रियां इन का पक्ष करती थीं और इन्हें कष्ट से बचाने में यत्नवान रहती थीं वहां से चार वर्ष के पीछे फिर हिन्दुस्थान आए और बाईस वर्ष की अवस्था में अंग- रेज़ी पढ़ना आरंभ किया पर चित्त धर्म की चिंता में अधिक रहता था इस से इस भाषा के सीखने में बहुत दिन लगे किन्तु सीखा तो भी इतना कि अंगरेज़ी में कई एक बड़ीर पुस्तकें लिखीं और बहुत से अंगरेज़ों के द्वारा प्रतिष्ठा पाई यह संस्कृत, अरबी, फारसी, बंगला, हिन्दी, इबरानी, ग्रीक, लैटिन, उरदू और अंगरेज़ी जानते थे तथा काम चलाने भर को और भी कई भाषाओं में बोध रखते थे।

१२१० हिजरी (१८०३ ई०) में इनके पिता का परलोकबास हुआ इस से कुटुंब की चिन्ता आ पड़ी पर पैतृक सम्पत्ति का तृतीयभाग जो इन्हें मिला था उस से निर्वाह न हो सका अतः रंगपुर की कलेक्टरी में काम करनेलगे; कलेक्टर डिग्बी साहब सज्जन और गुणग्राही थे इन का आदर करते थे और अंगरेज़ी में सहायता देते थे इस कारण राममोहन की उस भाषा में योग्यता और बंगालियों में बहुत प्रतिष्ठा होगई इस काम से इन्होंने बहुत

रुपया कमाया और कुछ वर्ष पीछे इन के भाई निस्सन्तान मर गए इस से उन का धन भी इन्हीं के हाथ आया पर इस में दौड़ धूप बहुत करनी पड़ी क्योंकि जाति में यह न थे इस से बिरादरीवालों के साथ मुकद्दमा करना पड़ा वहां हिन्दू शास्त्रों के द्वारा जातिवालों तथा हाकिमों के आगे बड़ी कठिनता से सिद्ध किया कि हम जातिभ्रष्ट नहीं हैं। यह समझते थे मनुष्यों का उपकार करने में बहुत सा धन चाहिए इसी निमित्त बाप की सम्पत्ति के अर्थ इतना कष्ट उठाया और बहुत धन होने से नौकरी छोड़ के फिर मुर्शिदाबाद आए वहां फारसी में एक पुस्तक लिखी जिस के नाम का अर्थ यह है कि—बुत-परस्ती सब मज़हबों के खिलाफ है—इसके पीछे १२२१ हिजरी (१८१४ ई०) में कलकत्ते आए वहां एकांत में रहकर धर्म का विचार करते रहे कलकत्ते के पूर्व सरक्यूलर रोड में एक सुंदर घर में रहते थे जिसके चारों ओर बाग था इस समय यह चालीस वर्ष के थे तब से मरणकाल तक इन्हों ने ब्राह्मधर्म का प्रचार ही अपना मुख्य काम समझा जितनी भाषा जानते थे उन सब में अपने मत की पोथी बना के बांटना, इंजील की अच्छी २ बातें बंगभाषा में अनुवाद करना, यही उनका काम था जिस में बहुत परिश्रम और धन लगता था। इस अवसर पर हिंदू मुसलमान और क्रिस्तान सभी ने इन के विरोध में लेख लिखे पर इन्हों ने अपना मत न छोड़ा और निर्भय रूप से अपना काम करते रहे इस परिश्रम का बहुत दिनों पर यह फल हुआ कि कई एक प्रतिष्ठित जन इन के साथी होगए और १२३४ हिजरी (१८२० ई०) में कलकत्ता वाले कमल बाबू के घर पर ब्राह्मसमाज स्थापित हुई सभ्य केवल चार पांच थे और राममोहनराय को प्राण के भय से शस्त्र रखना पड़ता था इन की समाज कलकत्ते में आज तक बनी है जो हर बुधवार को एकत्र होती है और सभासद लोग पहिले ब्रह्म की उपासना करते हैं फिर नाना प्रकार नीति के व्याख्यान देते हैं और अंत में राममोहन कृत गीत गाते हैं धर्म और विद्याप्रचार के लिए बहुत सी पुस्तकें और तत्वबोधिनीपत्रिका ब्राह्मसमाज से निकलती है सभा में उपासना करने और उपदेश सुनने के लिए किसी का कोई रोकटोक नहीं है। इस सभा में ब्राह्मण शूद्र विद्वान मूर्ख सभी को एक मार्ग का पथिक देख कर बहुत से प्रसिद्ध हिन्दुओं को बुरा लगा इस से

ब्राह्मसमाज के विरुद्ध उन्हों ने धर्मसभा स्थापित की इन दोनों समाजों का बहुत दिन तक विवाद होता रहा राजा राममोहन राय के समय में सती होने की रीति प्रचलित थी सैकड़ों हिन्दूललना पति के साथ जीती जल जाती थीं लोगों को दृढ़ विश्वास था कि पति के साथ प्राणत्याग करने से स्त्री को अक्षय स्वर्ग लाभ होता है पर यह नहीं कहा जा सकता कि सभी स्त्रियां इसी विचार से चिता में बैठ जाती थीं बहुतेरी अपना कलंक मिटाने और नाम पाने के लिए भी ऐसा करती थीं लोग कहते हैं कोई २ चिता से भागती भी थीं उन्हें उन के वंशवाले बांसों से दबा के जला देते थे और उन का चिल्लाना न सुन पड़ने की मनसा से चारों ओर कोलाहल करते तथा बाजे बजाने लगते थे। यह चाल दूर करने के लिए राममोहन राय ने बड़ा उपाय किया कई एक इस विषय के ग्रंथ भी लिखे कि यह धर्म नहीं है न धर्मशास्त्र में इस की आज्ञा है गवर्नमेंट तो यह रीति दूर करने का मानस गवर्नर जेनरल लार्ड कार्नवालिस ही के समय से रखती थी पर इस विचार से कुछ न करती थी कि ऐसा करने से हिन्दूधर्म पर हस्तक्षेप होगा किंतु इस समय राममोहन राय की पुस्तकें देख के लार्ड बेंटिंग बहादुर ने सती होना एक साथ उठा दिया यह घटना १८८६ विक्रमी १८२९ ई० की ८ वीं दिसम्बर को हुई थी तब से यह रीति प्रायः उठ ही गई। उस समय धर्मसभा तथा और बहुत लोगों ने हस्ताक्षर कर के इस आज्ञा के प्रतिकूल निवेदनपत्र भेजा इधर राममोहन राय, द्वारकानाथ ठाकुर, कालीनाथ राय इत्यादि कई लोगों ने इस का प्रतिवाद किया अंत में सर्कार ही की आज्ञा कायम रही इस से कलकत्ते की धर्मसभावालों का जी छोटा हो गया।

जिस की विद्या धन और सभ्यता आज दिन सारी धरती में बढ़ी चढ़ी है उस उस इंग्लिस्तान के देखने की राममोहन राय को बहुत दिन से इच्छा थी यह बात विदित होने पर लोगों ने इन्हें बहुत कुछ समझाया भी पर इन्हों ने कहा—जहाज पर चढ़ने से जाति नहीं जाती—यह लोगों का विरोधी बनना नहीं चाहते थे क्योंकि समझते थे कि जनसमुदाय को छोड़ देने से मनोरथ का सफल होना कठिन पड़ जाता है इस से रीतियों का संशोधन भी वहीं तक करते थे जहां तक लोगों की रुचि देखते थे [illegible]

रुपया कमाया और कई वर्ष पीछे दोना भाई निःसंतान मर गए इस से उन का धन भी इन्हीं के हाथ आया पर इस में दौड़ धूप बहुत करनी पड़ी क्योंकि जाति में यह न थे इस से बिरादरीवालों के साथ मुकद्दमा करना पड़ा वहां हिन्दू शास्त्रों के द्वारा जातिवालों तथा हाकिमों के आगे बड़ी कठिनता से सिद्ध किया कि हम जातिभ्रष्ट नहीं हैं। यह समझते थे मनुष्यों का उपकार करने में बहुत सा धन चाहिए इसी निमित्त बाप की सम्पत्ति के अर्थ इतना कष्ट उठाया और बहुत धन होने से नौकरी छोड़ के फिर मुर्शिदाबाद आए वहां फ़ारसी में एक पुस्तक लिखी जिस के नाम का अर्थ यह है कि—बुत-परस्ती सब मज़हबों के खिलाफ है—इसके पीछे १२२१ हिजरी (१८१४ ई०) में कलकत्ते आए वहां एकांत में रहकर धर्म का विचार करते रहे कलकत्ते की पूर्व सरक्यूलर रोड में एक सुंदर घर में रहते थे जिसके चारों ओर बाग था इस समय यह चालीस वर्ष के थे तब से मरणकाल तक इन्हों ने ब्राह्मधर्म का प्रचार ही अपना मुख्य काम समझा जितनी भाषा जानते थे उन सब में अपने मत की पोथी बना के बांटना, इंजील की अच्छी २ बातें बंगभाषा में अनुवाद करना, यही उनका काम था जिस में बहुत परिश्रम और धन लगता था। इस अवसर पर हिंदू मुसलमान बौद्ध क्रिस्तान सभी ने इन के विरोध में लेख लिखे पर इन्हों ने अपना मत न छोड़ा और निर्भय रूप से अपना काम करते रहे इस परिश्रम का बहुत दिनों पर यह फल हुआ कि कईएक प्रतिष्ठित जन इन के साथी होगए और १२३४ हिजरी (१८२७ ई०) में कलकत्ता वाले कमल बाबू के घर पर ब्राह्मसमाज स्थापित हुई सभ्य केवल चार पांच थे और राममोहनराय की प्रथा के भय से आड़ रखना पड़ता था इन की समाज कलकत्ते में आज तक बनी है जो हर बुधवार को एकत्र होती है और सभासद लोग पहिले ब्रह्म की उपासना करते हैं फिर नाना प्रकार नीति के व्याख्यान देते हैं और अंत में राममोहन कृत गीत गाते हैं धर्म और विद्याप्रचार के लिए बहुत सी पुस्तकें औ तत्त्वबोधिनीपत्रिका ब्राह्मसमाज से निकलती है सभा में उपासना करने और उपदेश सुनने के लिए किसी को कोई रोकटोक नहीं है। इस सभा में ब्राह्मण शूद्र विद्वान मूर्ख सभी को एक मार्ग का पथिक देख कर बहुत से प्रसिद्ध हिन्दुओं को बुरा लगा इस से

ब्राह्मसमाज के विरुद्ध उन्हों ने धर्मसभा स्थापित की इन दोनों समाजों का बहुत दिन तक विवाद होता रहा राजा राममोहन राय के समय में सती होने की रीति प्रचलित थी सैकड़ों हिन्दूललना पति के साथ जीती जल जाती थीं लोगों का दृढ़ विश्वास था कि पति के साथ प्राणत्याग करने से स्त्री को अक्षय स्वर्ग लाभ होता है पर यह नहीं कहा जा सकता कि सभी स्त्रियां इसी विचार से चिता में बैठ जाती थीं बहुतेरी अपना कलंक मिटाने और नाम पाने के लिए भी ऐसा करती थीं लोग कहते हैं कोई २ चिता से भागती भी थीं उन्हें उन के वंशवाले लाठी से दबा के जला देते थे और उन का चिल्लाना न सुन पड़ने की मनसा से चारों ओर कोलाहल करते तथा बाजे बजाने लगते थे। यह चाल दूर करने के लिए राममोहन राय ने बड़ा उपाय किया कई एक इस विषय के ग्रंथ भी लिखे कि यह धर्म नहीं है न धर्मशास्त्र में इस की आज्ञा है गवर्नमेंट तो यह रीति दूर करने का मानस गवर्नर जेनरल लार्ड कार्नवालिस ही के समय से रखती थी पर इस विचार से कुछ न करती थी कि ऐसा करने से हिन्दूधर्म पर हस्तक्षेप होगा किंतु इस समय राममोहन राय की पुस्तकें देख के लार्ड बेंटिंग बहादुर ने सती होना एक साथ उठा दिया यह घटना १२३६ हिजरी १८२८ ई० की ८ वीं दिसम्बर को हुई थी तब से यह रीति प्रायः उठ ही गई। इस समय धर्मसभा तथा और बहुत लोगों ने हस्ताक्षर कर के इस आज्ञा के प्रतिकूल निवेदनपत्र भेजा इधर राममोहन राय, द्वारकानाथ ठाकुर, काशीनाथ राय इत्यादि कई लोगों ने इस का प्रतिवाद किया अंत में सर्कार ही की आज्ञा कायम रही इस से कलकत्ते की धर्मसभावालों का जी छोटा हो गया।

जिस की विद्या धन और सभ्यता आज दिन सारी धरती से चढ़ी बढ़ी है उस उस इंग्लिस्तान के देखने की राममोहन राय को बहुत दिन से इच्छा थी यह बात विदित होने पर लोगों ने इन्हें बहुत बूझ समझाया भी पर इन्हों ने कहा--जहाज पर चढ़ने से जाति नहीं जाती -- यह लोगों का विरोधी बनना नहीं चाहते थे क्योंकि समझते थे कि जनसमुदाय को छोड़ देने से मनोरथ का सफल होना कठिन पड़ जाता है इस से रीतियों का संशोधन भी वहीं तक करते थे जहां तक लोगों की रुचि देखते थे सम्।

यात्रा में भी सब की सम्मति ले लेने ही का विचार रक्खा था इस इच्छा के पूर्ण होने में इन्हें बहुत कष्ट नहीं पड़ा इन को इच्छा थी कि विलायत जाने से वहां वालों की चाल ढाल रीति नीति आदि का ज्ञान भली भांति प्राप्त होगा और बड़ी अभिलाषा यह थी कि वहां अपने मत का प्रचार करेंगे उन्हीं दिनों दिल्ली के बादशाह को एक ऐसे योग्य पुरुष की चाह थी जो विलायत की बोर्ड आफ कंट्रोल नामक प्रधान सभा में उन की प्रार्थना पहुंचा सके इस से बादशाह ने इन्हें राजा की पदवी देकर वहां भेजा। यह १२३७ हिजरी (१८३० ई०),में इंग्लैंड गए थे जब समुद्र में बड़ी २ लहरें उठने और तूफान आने से जी घबराता था तब राममोहन राय मृत्युकाल के गीत गाकर भगवान का स्मरण करते थे इस रीति से अनुमान छः मास में इंगलिस्तान पहुंचे वहां बड़े २ लोगों से मिले और प्रतिष्ठा पाई तथा देश की शोभा देख के बड़े प्रसन्न हुए लंदन लिवरपूल मैनचेस्टर आदि सब बड़े २ नगरों में भली भांति भ्रमण किया और उत्तम शिल्प सुन्दर मंदिर चौड़ी सड़कें रमणीक वाटिका, कीर्तिस्तंभ, पथिकालय, अनाथालय, विद्यालय, औषधालय, भजनालय, राजसभा आदि को भले प्रकार देखा और चाल ढाल देख के भी बड़ा आनंद पाया।

इस समय भारतवर्षवाली अंगरेजों की कम्पनी ने इजारे की मीयाद बढ़ाने के लिए पार्लियामेंट में निवेदन किया था इस के कारण इंगलिस्तान के राजा के सन्मुख यहां के सब राजपुरुषों और प्रतिष्ठित अंगरेजों को इस बात की साक्षी देनी पड़ी थी कि कम्पनी भारत का शासन कैसा करती है इस में राजा राममोहन की साक्षी भी ली गई थी क्योंकि यह विद्वान राजनीतिज्ञ और कम्पनी की शासनप्रणाली के जाननेवाले थे इन्हों ने शासन-रीति के दोष निडर हो कर प्रकाश कर दिए और उन के दूर होने के उपाय भी बतलाए।

वहां से १२३८हिजरी(१८३२ई०)में फ्रांस की यात्राकी उन दिनों उसदेश के राजा लुइस फिलिप थे उन्हों ने इन का बड़ा आदर किया और कई दिन भोज दिया वहां जाने के पहिले यह फ्रांस की भाषा अच्छी रीतिसे न जानते थे इस से वहां की राजनीति जानने और प्रधान पुरुष से बातचीत करने के

निमित्त वर्ष भर वहां रह के उस भाषा में बोध प्राप्त किया जब यह हिंद में रहते थे तभी से प्रायः समस्त पृथ्वी के सज्जन इन्हें जानते थे इस से इंगलैंड और फ्रांस में जिस के यहां जाते थे वही आदर करता था वर्ष बितने पर वहां से फिर इंगलिस्तान को लौट आए तदनंतर १२४० हिजरी १८३३ ई० की १ली सितंबर को ब्रिसटल के निकटवाले स्टेप्लिटन ग्रोव नामक स्थान में गए कलकत्ते में रहनेवाले इनके मित्र हिन्दूकालिज संस्थापक डेविड हेयर साहब की कन्या इन्हें इस स्थान पर लाई थीं वहां यह कई दिन बड़े सुख से मित्रों के साथ मिलते मिलाते रहे और १९ सितम्बर को रोगग्रस्त हो गए तथा तीन दिन बराबर कष्ट सहकर २७ सितंबर को दुपहर के उपरांत दो बज के पचीस मिनिट बीतने पर देह त्याग की और इन की जीवनावस्था की इच्छानुसार वहीं एक रमणीय स्थान पर समाधि बनाई गई विदेश में मृत्यु होने के कारण भारतवासी मित्रों को क्षोभ हुआ परंतु जिन्हों ने कुमारी कारपेंटर का ग्रंथ पढ़ा वह जान गए कि क्षोभ का कारण कुछ नहीं है वहां उन की चिकित्सा वैसी ही हुई थी जैसी वहां के प्रतिष्ठितों की होती है।

कलकत्ता के द्वारिकानाथ ठाकुर ने १२५० हिजरी (१८४३ ई०) में इंगलैंड जाकर इन की समाधि का दर्शन किया और २८ मई को मृतकशरीर निकाल के आरनोज़वेल नामक स्थान में कबर बना के उस पर एक अति सुंदर स्मरण स्तम्भ खड़ा किया जो आज तक बना है और वहां जानेवाले भारत-वासी बहुधा देखने जाते हैं।

इस बात की बहुत चर्चा रही थी कि मरने के समय यह कौन मत मानते थे मुसलमानों ने उन्हें मुसलमान समझा ईसाइयों ने ईसाई जाना वेदां-तियों ने वेदांती अनुमान किया पर राममोहनराय इन में कोई न थे हां सभी धर्मग्रन्थों की अच्छी बातें मानते थे इन के मत का विवरण लड़कों की समझ में न आवेगी इस से थोड़ी सी मोटी ही बातें लिखते हैं:—

राजा राममोहनराय का सिद्धांत था कि मनुष्य कभी भ्रम शून्य नहीं हो सकता इस में उस के लिखे शास्त्र भी भ्रम शून्य नहीं हैं। परमेश्वर में कितनी शक्ति है कहां तक दया और कहां तक क्षमा है, उस का रूप और अभिप्राय कैसा है इन बातों का पूर्णरूप में वर्णन करना दूर रहा सोचना भी दुस्तर है

यात्रा में भी सब की सम्मति ले लेने ही का विचार रक्खा था इस इच्छा के पूर्ण होने में इन्हें बहुत कष्ट नहीं पड़ा इन की इच्छा थी कि विलायत जाने से वहां वालों की चाल ढाल रीति नीति आदि का ज्ञान भली भांति प्राप्त होगा और बड़ी अभिलाषा यह थी कि वहां अपने मत का प्रचार करेंगे उन्हीं दिनों दिल्ली के बादशाह को एक ऐसे योग्य पुरुष की चाह थी जो विलायत की बोर्ड आफ कंट्रोल नामक प्रधान सभा में उन की प्रार्थना पहुंचा सके इस से बादशाह ने इन्हें राजा की पदवी देकर वहां भेजा। यह १२३७ हिजरी (१८३० ई०) में इंग्लैंड गए थे जब समुद्र में बड़ी २ लहरें उठने और तूफान आने से जो घबराता था तब राममोहन राय मृत्युकाल के गीत गाकर भगवान का स्मरण करते थे इस रीति से अनुमान छः मास में इंगलिस्तान पहुंचे वहां बड़े २ लोगों से मिले और प्रतिष्ठा पाई तथा देश की शोभा देख के बड़े प्रसन्न हुए लंदन लिवरपूल मैनचस्टर आदि सब बड़े २ नगरों में भली भांति भ्रमण किया और उत्तम शिल्प सुन्दर मंदिर चौड़ी सड़कें रमणीय वाटिका, कीर्तिस्तंभ, पथिकालय, अनाथालय, विद्यालय, औषधालय, भजनालय, राजसभा आदि का भले प्रकार देखा और चाल ढाल देख के भी बड़ा आनंद पाया।

इस समय भारतवर्षवाली अंगरेज़ों की कम्पनी ने इजारे की मीयाद बढ़ाने के लिए पार्लियामेंट में निवेदन किया था इस के कारण इंगलिस्तान के राजा के सन्मुख वहां के सब राजपुरुषों और प्रतिष्ठित अंगरेज़ों का इस बात की शाक्षी देनी पड़ी थी कि कम्पनी भारत का शासन कैसा करती है इस में राजा राममोहन की शाक्षी भी ली गई थी क्योंकि यह विद्वान राजनीतिज्ञ और कम्पनी की शासनप्रणाली के जाननेवाले थे इन्हों ने शासन-रीति के दोष निडर हो कर प्रकाश कर दिए और उन के दूर होने के उपाय भी बतलाए।

वहां से १२३८ हिजरी (१८३२ ई०) में फ्रांस की यात्रा की उन दिनों उस देश के राजा लुइस फ़िलिप थे उन्हों ने इनका बड़ा आदर किया और कई दिन भोज दिया वहां जाने के पहिले यह फ्रांस की भाषा अच्छी रीतिसे न जानते थे इस से वहां की राजनीति जानने और प्रधान पुरुष से बातचीत करने के

निमित्त वर्ष भर वहां रह के उस भाषा में बोध प्राप्त किया जब यह विद में रहते थे तभी से प्रायः समस्त पृथ्वी के सज्जन इन्हें जानते थे इस से इंग्लैंड और फ्रांस में जिस के यहां जाते थे वही आदर करता था वर्ष दिन के पर वहां से फिर इंगलिस्तान को लौट आए तदनंतर १२४० हिजरी १८३३ ई० की १ ली सितंबर को ब्रिसटोल के निकटवर्ती स्टेप्लिटन ग्रोव नामक स्थान में गए कलकत्ते में रहनेवाले इनके मित्र हिन्दू कालिज संस्थापक डेविड हेयर साहब की कन्या इन्हें इस स्थान पर लाई थीं वहां यह कई दिन बड़े सुख से मित्रों के साथ मिलते मिलाते रहे और २५ सितंबर को रोगग्रस्त हो गए तथा तीन दिन बराबर कष्ट सहकर २७ सितंबर को दुपहर के उपरांत दो बजे के पचीस मिनिट बीतने पर देह त्याग की और इन की जीवनावस्था की इच्छानुसार वहीं एक रमणीय स्थान पर समाधि बनाई गई विदेश में मृत्यु होने के कारण भारतवासी मित्रों को क्षोभ हुवा परंतु जिन्हों ने कुमारी कारपेंटर का ग्रंथ पढ़ा वह जान गए कि क्षोभ का कारण कुछ नहीं है वहां उन की चिकित्सा वैसी ही हुई थी जैसी वहां के प्रतिष्ठितों की होती है।

कलकत्ता के द्वारिकानाथ ठाकुर ने १२५० हिजरी (१८४३ ई०) में इंगलैंड जाकर इन की समाधि का दर्शन किया और २८ मई को मृतकशरीर निकाल के आरनासवेल नामक स्थान में कबर बना के उस पर एक अति सुंदर स्मरण स्तम्भ खड़ा किया जो आज तक बना है और वहां जानेवाले भारत-वासी बहुधा देखने जाते हैं।

इस बात की बहुत चर्चा रही थी कि मरने के समय यह कौन मत मानते थे मुसलमानों ने इन्हें मुसलमान समझा ईसाइयों ने ईसाई जाना वेदा-न्तियों ने वेदान्ती अनुमान किया पर राममोहनराय इन में कोई न थे हां सभी धर्मग्रन्थों की अच्छी बातें मानते थे इन के मत का विवरण लड़कों की समझ में न आवैगी इस से थोड़ी सी छोटी ही बातें लिखते हैं:—

राजा राममोहनराय का सिद्धांत था कि मनुष्य कभी भ्रम शून्य नहीं हो सकता इस से उस के लिखे शास्त्र भी भ्रम शून्य नहीं हैं। परमेश्वर में कितनी शक्ति है कहां तक दया और जहां तक क्षमा है, उस का रूप और अभिप्राय कैसा है इन बातों का पूर्णरूप में वर्णन करना दूर रहा सोचना भी दुस्तर है

संसार और अपने लोगों को छोड़ के बनबास करना धर्म नहीं है। धरती के पदार्थों की प्रतिमा बनाके पूजना धर्म नहीं है दर्शन शास्त्र पढ़के परमेश्वर के विषय में तर्क करना धर्म नहीं है। किसी पुरुष विशेष को ईश्वर का कृपापात्र समझ के पूजना धर्म नहीं है। जल वायु सूर्यादि को परमेश्वर जानना धर्म नहीं है। छापा तिलक लगाना करताल झांजरी मृदंग आदि बजाके रात्रि की निस्तब्धता में विघ्नडालना धर्म नहीं है। जिस आदि पुरुष ने सारी सृष्टि रची है उसी नित्य, ज्ञानस्वरूप, अनंतमंगलमय, स्वतंत्र, निराकार, अद्वितीय, सर्वव्यापी, सर्वनियंता, सर्वाश्रय, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, ध्रुव और पूर्णपुरुष की उपासना से दोनों लोक का कल्याण होता है। उसी में प्रीति रखने, उसी के प्रियकार्य करने में उन का विश्वास था जन्म भर राममोहन ने इसी का अनुष्ठान और उपदेश किया तथा कुछ कृतकार्यता भी प्राप्त कर ली थी।

इन्हों ने देश का जैसा उपकार किया था वैसा हम बदला नहीं दे सकते वरंच हमारे बहुत से देश भाई उन के विरोधी हैं वे इन के ब्राह्मधर्म से देश का उद्धार नहीं समझते यद्यपि ब्राह्म मत से ईसाई मत की बहुत वृद्धि रुक गई जो अंगरेजी राज्य के प्रारंभ में अत्यंत फैली हुई थी। इस बात के लिए राममोहन का गुण मानना चाहिए।

विदेश में इन की प्रतिष्ठा इस देश से अधिक हुई थी इन के मरने पर यूरप में सहस्रों स्त्री पुरुष चिल्ला २ के रोए थे। इन्हें विलायत के बहुत लोग ईसामसीह की भांति मानते थे एक बार इन्हों ने मन की कुचिंता पर व्याख्यान दिया उसे सुन के एक स्त्री ने आश्चर्य से पूछा कि—क्या आप के चित्त में भी कुचिंता उपजती है—इतना ही नहीं वरंच बहुतों को विश्वास था कि राजा राममोहन राय किसी एक स्थान के नहीं किन्तु जगतभर के श्रेष्ठ पुरुष हैं। यह राजनीति और धर्मनीति दोनों जानते थे। बहुत सी भाषा और विद्या में भी अभ्यास रखते थे। इन की अंगरेजी यूरप में भी सराही गई थी। फारसी में भी यह मौलवी कहलाते थे संस्कृत में प्रायः ऐसी पुस्तकही नहीं है जिस की इन्हों ने आलोचना न की हो, दर्शनशास्त्र का कई भाषाओं में अनुवाद करके विद्या रसिक विदेशियों का भी

इन्हों ने बहुत उपकार किया था सच तो यों है कि ऐसे लोग बहुत नहीं होते।

पद्मलोचन मुखोपाध्याय।

इन का चरित्र संक्षेप ही में लिखा जाता है। यह एक साधारण गृहस्थ के लड़के थे इन को बहुत लोग जानते भी न थे पर उत्तम गुण इन में पूर्ण रूप से प्रस्तुत थे। १२८४ हिजरी (१७७८ ई०) में हावड़ा जिला के बालीग्राम में इन का जन्म हुआ था पिता का नाम गोकुलानन्द मुकर्जी था जो कुलीन और प्रतिष्ठित पुरुष थे कलकत्ते में नौकर थे तीन चार सौ रुपया महीना कमाते थे इस से खाने पहिनने का दुःख न था। पद्मलोचन इन के ज्येष्ठ पुत्र थे। जो पांच बरस की अवस्था में पढ़ने के लिए पाठशाला में बिठाये गए फिर कुछ दिन पीछे जान बाजार के फ्री स्कूल में भेजे गए वहां नाना के यहां रह के अंगरेजी पढ़ने लगे (बहू बाजारवाले पाकड़ाशी इन के नाना का वंश हैं) इस स्कूल में प्रायः सभी लड़के अंगरेजों और फिरंगियों के थे उन में से बहुतों को इन्हों ने अपने गुणों से मोहित कर लिया सब इन की प्रीति में सुखी थे पद्मलोचन भी अपना अवकाश का समय इन्हीं के साथ वा और २ साहबों के संग बिताते थे। अंगरेजों के साथ बात चीत करते २ बोलने का अभ्यास बहुत अच्छा हो गया और साथ ही अंगरेजों की जो सहनशीलता, देशहितैषिता, परिश्रम, साहस, सब सद्गुण भी आ गए किंतु पतलून पहिनना, मदिरापीना, धर्म न मानना आदि औगुण एक भी न व्यापा यह बड़े अचंभे की बात है। उन दिनों अंगरेजी पढ़ने का आज कल का सा सुभीता न था ब्राह्मणों की टोल और गुरु जी की पाठशाला ही थी जो थोड़ी अंगरेजी जानते थे वही बड़ा आदर पाते थे उस समय में मुकर्जी महाशय ने उक्त भाषा की इतनी योग्यता प्राप्त की थी कि सचमुच विद्वान कहे जा सकते थे पढ़ चुकने पर कलकत्ते में एक सौदागर के यहां नौकरी की फिर कुछ दिन पर उसे छोड़ के कम्पनी के किसी दफ्तर में नियुक्त हुए रैविन्यु एकाउंटेंट आफिस (जिस दफ्तर में देश के मालगुजारी का हिसाब रहता है) में दफ्टरी की, पहिले पंद्रह रुपए महीने की फिर

अपने सद्गुणों से सब के साथ सरल और उदार व्यवहार रख के सदा सत्य शील के साहिबों को इतना प्रसन्न कर लिया कि धीरे २ पद की वृद्धि होने लगी यहां तक कि अंत में सौ रुपया मासिक के रेजिस्ट्रार हो गए बंगालियों में यह पद पहिले पहिल इन्हीं को मिला था। दफतर में जितने बंगाली थे उन में से कोई अंगरेजी बोलने में इन के समान न था इस से साहब लोगों को जब किसी से कुछ कहना सुनना होता था तो इन्हीं को मध्यस्थ बनाते थे अवसर मिलने पर साहब लोग इन्हें बुलाते और बातचीत से बड़े प्रसन्न होते इस रीति से पद्म बाबू आफिस के सभी उच्चकर्मचारी तथा और २ प्रतिष्ठित अङ्गरेजों के मित्र हो गए इन की बात साहबों को माननी ही पड़ती थी निदान यह आफिस के एक प्रधान पुरुष हो गए और बहुत से काम केवल अपनी इच्छा से करनेलगे।

कुछ दिन पर इन्होंने मामा का घर छोड़ दिया और बाली में आरहे प्रतिदिन नाव पर आनेजाने लगे। उस समय वहां के लोगोंकी विद्या और धनके उपार्जनका सुभीता न होने से बड़ी बुरी दशा थी इस से इन्होंने बहुतसा यत्न कर के डिंगाई पाड़ा में एक अङ्गरेजी स्कूल खोला जिस में लड़कों से कुछ फीस न लेते थे वरञ्च कंगाल बालकों को पुस्तकादि अपने पास से देते थे। पहिले यह स्वयं पढ़ानेलगे सवेरे से दस बजे तक पढ़ा के कलकत्ते में नौकरी पर जाते थे वहां से सांझको आकर फिर पढ़ाते थे इस परिश्रम को धन्य है! कुछ वर्ष बीतने पर थोड़े से शिष्य पढ़ाने योग्य होगए तब पद्म बाबू को कुछ विश्राम मिला केवल रात्रिके समय इन्हीं प्रधानछात्रोंको पढ़ाते थे और आफिस की छुट्टीवाले दिन स्कूल का कामकाज देखते थे जो छात्र अच्छी रीतिसे लिखने पढ़ने लगे उन्हें यह आफिस में ले जा कर काम सिखानेलगे इस समय साहिबों ने इन का वेतन बढ़ाना चाहा तो इन्हों ने कहा हमारे लिए सौ रुपया महीना बहुत है बढ़ाने का कोई काम नहीं—जब वेतन की वृद्धि की चर्चा होती थी तब पद्मलोचन यही कहते थे वरंच यही कह के न रह जाते थे यह भी समय पड़ने पर कह देते थे कि हमें काम बहुत पड़ता है इस से दो एक सहकारी होने चाहिए और वह पद दया करके हमारे किसी शिष्य को दीजिए क्योंकि उन लोगों को कहीं जीविका का उपाय नहीं

है—कभी कहते थे कि—इस दफ़तर में हमारे दो एक पड़ोसी काम करते हैं पर उन की तनखाह से उन का निर्वाह नहीं होता आप जो कुछ हमारा मासिक बढ़ाना चाहते हैं वह कृपा कर के उन्हीं के वेतन में बढ़ा दीजिए—ऐसे ही उदार वाक्यों से पद्म बाबू अपनी मासिक आय नहीं बढ़ने देते थे।

यह किसी ग्रामवासी को दुःखी देखते थे तो उस की सहायता के लिए छटपटा उठते थे किसी परिवार को धनहीन सुनते थे तो उस में के जो कोई कुछ पढ़ा लिखा होता था उसे दफतर में काम सिखाने लगते थे किसी २ को आफिस जाने योग्य कपड़ा भी अपने ही पास से बनवा देते थे जब उसे काम आ जाता था तो किसी अफसर के पास उसे ले जाके कहते थे कि—यह बड़ा गरीब है और काम चलाने भर को लिख पढ़ लेता है इसे कोई नोकरी दे दीजिए तो मुझ पर बड़ी दया हो—साहब लोग इन के बचन को प्रीति के मारे कभी न टालते थे। इस रीति से पद्मलोचन ने बालों के बहुत से लोगों का उपकार किया था।

पद्म बाबू के सद्गुणों पर रीझ जाने से हम अभी तक इन का चरित्र नहीं लिख सके अब लिखते हैं जान पड़ता है जब यह मामा के यहां से बाप के घर चले आए थे तभी खालना जेपुर के पालधी बंगवालों के यहां इन का ब्याह हुआ था जैसे साधु प्रकृति के यह थे वैसी ही इन की स्त्री भी दयावती और सरल स्वभाव की थीं पद्म बाबू दुःखियों की सहायता में जितना काल और धन लगाते थे उतनी ही वह प्रसन्न होती थीं ऐसी स्त्री पाने से यह भी बड़े ही प्रसन्न थे प्रतिष्ठित और कुलीन होने पर भी इन्हों ने ब्याह एक ही किया था यह थोड़ी प्रशंसा का काम न था। इन के पिता के दो स्त्री थीं। यह बड़ी स्त्री के पुत्र थे। यह रीति है कि जिस के दो स्त्री होती हैं वह बहुधा छोटी से अधिक स्नेह रखता है गोकुलचन्द भी ऐसे ही मनुष्य थे और उन की छोटी स्त्री भी अपनी सौत से बड़ा द्वेष करती थीं उन्हों ने नित्य २ लड़ाई झगड़ा कर के पद्मलोचन के पिता का मन फेर दिया था पर पद्मलोचन इस बात से दुःखित नहीं हुए विमाता की भक्ति करते ही रहे पर जितना वह प्रेम से समझाते थे उतना ही वह और प्रचंड

जाती थी इन्हों ने बिमाता का शत्रुभाव बहुत दिन तक सहा पर अंत में जब बहुत ही दुःख पाया तो बाली छोड़ के कलकत्ते में जा बसे पर कभी २ माता पिता और पड़ोसियों से मिलने आया करते थे बालीवालों को भुला नहीं दिया।

इन के पिताने अपनी मृत्युके दो एक दिन पहिले सब धन छोटीस्त्री और उस की संतति का दे दिया जब यह पिता का अंतिम दर्शन करने आए तो इन के चचा ने कहा कि—दादा से पूछो कुछ इन के पास है?—तो पद्म बाबू ने उत्तर दिया—यदि होगा तो हमारे बिमात्र भाइयों को दिया होगा पूछने से ठीक २ न बतावेंगे और मैं नहीं चाहता कि अंतकाल में इन्हें मेरे कारण झूठ बोलना पड़े। पर बहुत कहने से जब इन्हों ने पूछा तो पिता ने अपने ऊपर ऋण बहुत सा बताया इसे निपटाने और मृतक कर्म करने के लिए इन्हें अपना कलकत्तेवाला घर बेंचना पड़ा पर बिमाता और उस की संतान से एक पैसा तक नहीं लिया कलकत्ते का घर बिक जाने पर फिर बाली में आके रहना पड़ा अंतिम दिनों में पद्म लोचन को ऐसे २ दुःख झेलने पड़े थे कि सुननेवाले कांप उठे पर इन्हों ने धैर्य के साथ उन्हें सहन कर लिया इन के चार लड़के हुए थे तीन तो पढ़ लिख कर काम काज करने लगे थे चौथा कालेज में पढ़ता था उन में से तीनों बड़े लड़कों की अकाल-मृत्यु हो गई पर पद्म बाबू शोक से कातर नहीं हुए मध्यम पुत्र की अंत्येष्टि के समय एक विदेशी से सावधानी के साथ बातचीत की थी और दूसरे ही दिन एक अनाथ बालक को कलकत्ता की दातव्य समाज में ले गए थे।

पद्म बाबू ने दो पदवी प्राप्त की थीं शिक्षादान के कारण बालीवाले इन्हें स्कूल मास्टर कहते थे इन दिनों लोग इस पद का बहुत आदर नहीं करते पर उस समय इस की बड़ी प्रशंसा थी। और अंगरेज लोग इन के सद्गुण के कारण लार्ड कहते थे जो इंग्लिस्तान का बड़ा माननीय पद है बड़े २ अंगरेज इन्हें लार्ड पद्म ही कह कर पुकारते थे। इंग्लैण्ड में यह पदवी कैसे लोगों को दी जाती है यह इसी एक बात से समझ में आ जायगी कि सरजानलारेंस * जो भारत के प्रधानशासनकर्ता थे वह भी

* सर जान लारेंस ने विलायत लौट जाने पर लार्ड का पद पाया था।

लार्ड न हो। इस से जान लेना चाहिए कि पद्मलोचन की अंगरेज़ लोगों में कितनी प्रतिष्ठा थी।

यह इतने दयालु और धार्म्मिक थे कि किसी का दुःख सुन कर जब तक उसे दूर न कर सकते थे सुचित्त ही न होते थे। और निस्पृह भी ऐसे थे कि चाहै जितनी प्राप्ति की सम्भावना हो पर भगड़े का काम न उठाते थे। एक बार साहबों ने सदर पोस्टआफ़िस की दीवानी देनी चाही पर इन्हों ने कहा कि—उस महकमे में बहुत से भले मानस काम करते हैं उन में से जो कोई कुछ अपराध करेगा तो हमें लज्जित होना पड़ेगा इस से हम यह काम लेना नहीं चाहते—पीछे साहब लोगों ने बहुत समझाय के और भली भांति यह विश्वास दिला के इन्हें पोस्टआफ़िस का अफ़सर नियत किया कि उस डिपार्टमेंट में अधिक मालमाल नहीं है। कुछ दिन के उपरांत एक पुरुष ने इन से नौकरी की प्रार्थना की इन्हों ने नौकर रख लिया पर उस ने थोड़े ही दिन में रुपया चुरा के कारावास प्राप्त किया इस बात पर पद्म बाबू ने आग्रहपूर्वक डाकखाने का काम यह सोच कर छोड़ दिया कि हमारे रहते हुए नौकरने दुष्कर्म किया और हम उसका दुःख दूर नहीं करसके। जब यह कलकत्ते में रहते थे तो नीलमणि दे नामक एक अंगरेज़ी के विद्वान और परम वैष्णव से बहुत इन का सत्संग रहता था इन की उन की सब बातें मिलती थीं इस मित्रता में बड़ा आनंद रहता था इन्हों ने जिस वंश में जन्म पाया था उस वंश के लोग शक्तिपूजक थे पर पद्मलोचन बाबू को यह मत न रुचता था यहां तक कि दुर्गापूजादि में जब इन के पिता बलिदान का प्रबन्ध करने लगते थे यह उदास हो के किसी पड़ोसी के यहां चले जाते थे बलिदान का कोलाहल सुन के इन की आंख डबडबा आती थी इसी दयालु प्रकृति से इन्हों ने नीलमणि का साथ होते ही वैष्णवमत ले लिया था।

यह सच्चे भी ऐसे थे कि कभी जान बूझ के झूठ नहीं बोले किसी को झूठी बातें कहते हुए देखते थे तो बड़े दुःखी होते थे आगे भर में जिस को सुनते थे कि दुःखी है उसी के यहां जा के सहायता करते थे इन्हों ने अपने मन को भी जीत रक्खा था, कपड़ा बहुत साधारण पहिनते थे और

नम्र भाव से रहते थे यदि किसी का उपकार करते और वह कृतज्ञता प्रकाश करता था तो कानों पर हाथ धर कर कहते थे—अरे राम २ ! यह क्या कहते हो—कामों से छुट्टी पाते तब तुलसी की माला लेके अपने इष्टदेव का स्मरण अथवा सज्जन शिष्यों के साथ धर्म्म की चर्चा करते रहते थे।

शरीर की रक्षा का भी वह पूरा ध्यान रखते थे नित्य बहुत तड़के उठ के स्नान ध्यानादि करते थे फिर कुछ देर कसरत करके काम धंधा आरंभ करते थे मछली मांस नहीं खाते थे संध्या को कुछ काल वायु सेवन भी करते थे इन बातों से मरणकाल तक बलहीन नहीं हुए देह में तेज भी ऐसा था कि देखने ही से जान पड़ता था कि कोई महा पुरुष हैं। सदा अपनी ही कमाई पर निर्वाह करते थे कभी किसी से सहायता लेना नहीं चाहते थे इस बात का प्रमाण यह है कि पेनशन लेकर एक बार तीर्थ यात्रा को जाने के लिए अपने तीसरे लड़के से सौ रुपए लिए थे सो पेनशन का रुपया पाते ही वृन्दा बन से पुत्र का धन भेज दिया था। कुछ काल तीर्थाटन करके घर फिर आए और बासठ वर्षकी अवस्था में १२४७ हिजरी (सन १८३० ई०) में बैकुंठवास किया इनके मरने से बालीग्राम सूना हो गया। जो बालीग्राम इन दिनों एक बड़ा नगर हो गया है जहां के छोटे २ खेरों में भी दो एक शिक्षित पुरुष दिखाई देते हैं जहां आज सैकड़ों परोपकारी जन विद्यमान हैं जहांकी शुभ-कारी सभा और शुभकरीपत्रिका बहुत दिन तक अपने नामके अनुसार काम करती रही है उस बाली की इतनी उन्नति का मूल बाबू पद्मलोचन मुखो-पाध्याय ही थे।

इन का आदि से अंत तक जीवनचरित्र पढ़ने से जाना जाता है कि इन्हों ने इस बात का उदाहरण ही दिखलाने के लिए जन्म ग्रहण किया था कि मनुष्य क्या है और उसे किस रीति से जीवन बिताना चाहिए। हे बालको ! यदि मनुष्य होने की इच्छा रखते हो यदि ईश्वर और जगत के प्यारे बनके सदा सुखी रहना चाहते हो तो महात्मा पद्मलोचन मुखोपाध्याय की चाल चलो।

मोतीलाल शील ।

परिश्रम और बुद्धिमानी से मनुष्य की कहां तक उन्नति हो सकती है यह बात इस के जीवनचरित्र से विदित होती है।

अनुमान सत्तर वर्ष हुए कि कलकत्ते में एक चैतन्य चरण नामक सुनार रहते थे उन का घर कलू टोला में था धन साधारण ही था और कपड़े का व्यवहार करते थे उन के एक लड़का और दो लड़कियां थीं इसी लड़के का नाम मोतीलाल था जिन का जन्म ११८८ हिजरी (१७९१ ई०) में हुआ था जब यह पांचबरस के हुए तब चैतन्य चरण का परलोक बास हो गया।

पहिले मोतीलाल शील पढ़ने के लिए गुरू जी के यहां गए वहां जितनी पढ़ाई होती है वह थोड़े ही दिन में सीख ली बंगला ऐसी अच्छी लिखने लगे कि देख के अचम्भा होता था यद्यपि लिखने पढ़ने का इन्हें अच्छा सुभीता नहीं मिला तो भी अपनी बुद्धि की तीव्रता से बहुत कुछ सीख लिया।

अठारह बरस की अवस्था में कलकत्ता सुरतिबागान निवासी मोहनचंद देव की कन्या से इन का विवाह हुआ इस के कुछ दिन पीछे अनुमान ११९९ हिजरी में यह अपनी श्वसुर के साथ पश्चिमोत्तर की तीर्थयात्रा को गए वहां बृन्दाबन जयपुर आदि कई स्थान देखे इससे भी बहुत कुछ जानकारी होगई फिर कलकत्ते लौटके १२०२ हिजरी (१८१५ ई०) में रोजगार आरम्भ किया।

कलकत्ते में जो किला है जहां सर्कारी बहुतसा सामान और सेना रहती है पहिले वहीं कोई काम करते रहे और रोजगार जमा लिया। १२०५ हिजरी (१८१८ ई०) में बोतल और कार्क का धन्धा शुरू किया चनेकी खरीदमें जैसा कृष्णपांती को लाभ हुआ था वैसा ही इन्हें इस में हुआ। बोतल और कार्क का थोक का थोक थोड़े दामों में मिल गया और बिक्री में बड़ा मुनाफा हुआ यही इन की उन्नति का मूल हो गया।

कुछ दिन पर किले का काम छोड़ कर इंगिलस्तान से आने वाले कम्पनी के सौदागरी जहाजोंके कप्तानके मुतसद्दी हुए जहाजमें जो माल आता था उसे बेचते और इस देश की नाना बस्तु खरीद देते थे इसमें इनकी बड़ी प्रतिष्ठा होती और प्राप्ति भी बहुत रहती थी यह काम इन्हों ने नौ वर्ष किया फिर १२३५ हिजरी (१८२८ ई०) में तीन बिलायती कोठियों के अध्यक्ष हुए।

जिन में थ्रिंकरी स्मिथसन् ल्डीहडमाई, लिविस्टोन श्राव लिचर्कैटेलदेस साहब थे और २ बड़े २ वाणिकजन इन की कोठियों के अध्यक्ष हुए तब मोती-लाल ने ऐसे परिश्रम और चतुरता से काम करना आरम्भ किया कि सुनने से आश्चर्य उपजता है प्रत्येक कोठी का नित्य २ का काम पूरा करते और आयव्यय का लेखा भी नित्य ही सम्भालते थे तथा जो कुछ देना पावना होता था उस के भुगतान के लिए प्रतिक्षण सन्नद्ध रहते थे। और कोठी के काम ही में लिप्त न रह कर निज का रोजगार भी अच्छी तरह उन्नत करते रहते थे बोतल और कार्क के सिवा अनेक प्रकार के देशी और बिलायती पदार्थों का क्रय विक्रय करते रहते थे। इस रीति से बहुत सा धन उपार्जित कर लिया। जब कोठीवाले साहबों का काम बंद हो गया तो इन्हों ने गंगा तीरवाली स्मिथसन की मैदे की कल मोल ली जो अभी तक कलकत्ते में बनी है एक यंगरेज भाड़े पर उसे चलाते हैं उस में भाफ के बल से बहुत शीघ्र मैदा पिसती है।

प्राप्ति के साथ २ प्राप्ति के उपाय की भी इच्छा प्रबल हुई पर इन्हों ने कभी बुरी रीति से रुपया कमाने की इच्छा तक नहीं की जिन दिनों चारों ओर से धन चला आता था उन्हीं दिनों भाड़े के घर बनवाने का इन्हों ने कलकत्ते में तथा उस के आस पास बहुत सी भूमि खरीदी थी इस बात पर यदि इन्हें कोई लोभी समझें तो उसे समझना चाहिए कि जिन लोगों के द्वारा संसार का उपकार होता है उन के लिए उच्च पदवी वा बहुत धन का यत्न करना दूषित नहीं है। यद्यपि इस बात का कोई पुष्ट प्रमाण नहीं मिलता कि केवल लोगों के भले ही के निमित्त यह रुपए के लिए इतनी दौड़धूप करते थे पर इस में कोई संदेह भी नहीं है कि इन के धन से देश का बहुत कुछ उपकार हुआ। इससे हम साहसपूर्वक कह सकते हैं कि यह धन का उचित बर्ताव करना जानते थे। जब गवर्नर जनरल मार्कुइस आफ् हेस्टिंग्ज बहादुर ने इस देश की शिक्षा के निमित्त कलकत्ता आदि नगरों में विद्यालय और कालिज खोलने के लिए देश के धनवानों से सहायता मांगी तब मोतीलालशील के हृदय में देशहित की बड़ी भारी तरंग उठी थी पर अवस्था अच्छी न थी इस से अधिक सहायता नहीं कर सके किंतु

वृद्धि होने पर १२४८हिजरी (१८४२ ई०)में कलकत्ता के पटलडांगा में शील्स कालेज नामक विद्यालय स्थापन किया था जिस में पहिले पहिल लड़कों से एक रुपया मासिक लिया जाता था * और कागज तथा पुस्तकादि इन्हीं से दी जाती थीं पर पीछे से वह कालेज हिन्दूमेट्रोपोलिटन कालेज में मिला दिया गया कुछ दिन पीछे जब मेट्रोपोलिटन कालेज उठ गया तो इन का कालेज अलग कर लिया गया और इन्हों ने बालकों से फीस लेने तथा पुस्तकादि देने की रीति उठाके उस का नाम—शील्सफ्रीकालेज (मतिलालशील अवैतनिक विद्यालय)—रक्खा जो कलूटोला की हालिडे स्ट्रीट के नं० ८ वाले गृह में आज तक बना हुआ है। एक समय इस में ३३० छात्र पढ़ते थे और अनुमान पांच सौ रुपए महीने का खर्च था जान पड़ता है उस कालेज की दशा आज भी वैसी ही है क्योंकि मोती बाबू प्रबंध बहुत अच्छा कर गए हैं।

१२३५हिजरी (१८२८ई०)में जब लार्डबेंटिंगने सतीदाहकी रीति उठा दी थी तब लोगों ने इस काम के विरुद्ध कलूटोला में एक धर्मसभा की थी पर वे लाटसाहब की आज्ञा को बदलवा नहीं सके जिस वर्ष मोतीलालने इस महल्ले में कालेज बनवाया था तभी एक दिन उक्त सभा में जाकर इस आशय का व्याख्यान दिया था कि आप लोग जिस प्रकार की कार्रवाई करते हैं उस से दया धर्म का साधन नहीं होता इस में समय को व्यर्थ न खोकर ऐसा करना चाहिए जिस में धर्मसभा का नाम सार्थक हो। इस व्याख्यान में इन्हों ने सभासदों को यह सम्मति दी कि सभा के व्यय से देश के अनाथ और अपंग लोगों का भरण पोषण होना उचित है और सहायता भी ऐसी दी कि काम भली रीति से होनेलगा सैकड़ों कंगाल मोती बाबू की दया से भोजन पाने लगे कुछ दिन में और लोगों ने देना बन्द कर दिया सभा भी उठ गई पर इन का दान बना ही रहा तथा १२५३ हिजरी (१८४५ई०) में ऐसा प्रबन्ध इन्हों ने कर दिया कि कलकत्ते के सैकड़ों दीन दुखी आज तक पलते हैं जिन दिनों कालेज खोला था और धर्मसभा में दीनपालन का यत्न किया था उन्हीं दिनों एक और भी ऐसा अच्छा काम किया था जिसे सभी कह सकते

* उस समय बहुत लोग समझते थे और अब भी कोई २ समझते हैं कि लड़कों को विना वेतन पढ़ाने से अपमान होता है। इसलिए पढ़के फीस लेते थे।

ह कि अति उत्तम था कलकत्ते से उत्तर प्राय तीन कोस पर बारकपुर वाली सड़क के पूरब बेलघरिया नाम का एक गांव है (जहां पूर्व बंगाल रेलवे का स्टेशन है) वहां पर इन्हों ने एक अतिथिशाला बनवाई थी जहां आज भी चार सौ कभी २ सात आठ सौ मुसाफिरों को बिश्राम मिलता है और भूखे प्यासों को भोजन भी दिया जाता है सच पूछो तो जीवन उन्हीं का सार्थक है और उन्हीं की कमाई सफल है जो अनजान, बिदेशी, जाड़े गरमी के सताए, निर्धन और निस्सहाय लोगों पर दया करते हैं, मोती बाबू के जीवन का अधिकांश ऐसे ही कामों में बीता था इन में यह भी बड़ा गुण था कि जिस कार्य को करते थे उस की युक्ति और फल पहिले ही समझ लेते थे आगा पीछा सोचे बिना किसी काम मे हाथ न लगाते थे जिस काम में बुद्धि के दोष से कोई कष्ट होता था उस का फिर नाम न लेते थे और निष्प्रयोजन एक पैसा भी न उठाते थे खरच बड़ा था पर नियम बिरुद्ध न था जिस से किसी कारण द्वेष हो जाता था उस से बोलना छोड़ देते थे नीति का उपदेश सभी छोटे बड़ों को करते रहते थे न्याय की बात में किसी का संकोच न करते थे काम चाहे जैसा पेंचदार हो पर बुद्धि बल से उस का सोच बिचार कर ही लेते थे इस से बड़े २ लोग इन का परामर्श लिया करते थे आचारभ्रष्ट धर्मत्यागी हिन्दुओं को यह बड़ी बुरी दृष्टि से देखते थे जातीय धर्म पर दृढ़ विश्वास रखते और उस के साधन में सदा सयत्न रहते थे शरणागत दुःखियों की सहायता तन मन धन से करते थे दुःखियों पर दयालु परोपकार में दृढ़ और बात के धनी भी पूरे थे ।

इन के पिता के बड़े भाई गौरचंद्र शील धनवान थे उन के कोई पुत्र न था इस से मरने के समय अपनी सम्पत्ति अपनी कन्या को दे गए थे पर वह कन्या छोटी थी इस से सारा भार मोतीलाल पर पड़ा था और इसी के धन से पहिले इन्हों ने व्यापार का लग्गा लगाया था यदि चाहते तो वह रुपया क्या और भी बहुत सा रुपया दबा बैठते पर इन्हों ने कौड़ी २ चुका दी और उस के धन से सहायता पाने के कारण मनसा बाचा कर्मणा उस कन्या के परिवार की उन्नति में यत्नवान रहते थे। हे बालकगण ! देखो इन के मन का भाव कैसा अच्छा था ।

जिम स्मिथसन और हल्डसवर्थ साहब ने यहां इनके ने काम किया था वह जब मर गए तब उन की मेम दुःख और दरिद्र से पीड़ित होने के कारण बहुत दिन तक हिंदुस्तान में बनी रही थीं उनकी सहायता में मोती बाबू ने बहुत सा परिश्रम और धन लगाया था यहां तक कि उन के विलायत जाने पर भी यहां से रुपया भेजा करते थे।

इन की स्मरणशक्ति और विचारशक्ति बड़ी ही दिव्य थी यद्यपि अच्छी तरह पढ़ने लिखने न पाए थे तो भी अंगरेज़ों के साथ रहने के कारण काम चलाऊ अंगरेज़ी लिख पढ़ लेते थे और सभी बातों को साफ समझ सकते थे। यह बाबू कभी नहीं बने एक ही सी चाल सदा चलते रहे थे धोती चपकन और हाथ की बांधी पगड़ी ही पहिनते थे रुपया होने से बहुतेरे ज़मींदार बनना चाहते हैं बहुतेरे बहुत लोगों के स्वामी कहलाना चाहते हैं पर यह ऐसे न थे जिन लोगों को इन्हों ने ऋण दिया था उन में बहुतेरों ने नगद रुपया न दे सकने के कारण अपनी भूमि देदी थी इन दिनों वह ज़मींदारी मोती बाबू की संतान के यत्न से अच्छी उन्नति पर है।

इन्हों ने अपनी बुद्धि और परिश्रमसे उन्नतिका सब से उत्तम फल प्राप्त कर के लोगों के बहुत से उपकार द्वारा सुयश लाभ कर के १८९१ विक्रमी (१८३४ ई०) में तीन दिन रोगग्रस्त रह के सप्तमी तिथि को रात्रि को ज्येष्ठ मास में अपने बनाए हुए गंगाघाट पर तिरसठ वर्ष की आयु में [illegible] की यात्रा की थी लोग कहते हैं मृत्यु का भय इन्हें मरणकाल तक न था। यह श्याम रंग के मनुष्य थे और देह न बहुत लंबी थी न ठिगनी।

इन के पांच लड़के थे छोटेलाल कुन्नीलाल पन्नालाल गोविन्दलाल कन्हैयालाल यह लोग पिता की मृत्यु के उपरांत कलकत्ते में बहुत दिन तक बड़े समारोह के साथ रहे थे धन सम्पत्ति का पारावार न था इन के अतिरिक्त कन्या भी पांच थीं और पांचों बहुत अच्छे घरों में ब्याही थीं पर इन दिनों अकेले गोविन्दलाल ही रह गए हैं; लोग बड़ी प्रसन्नता के साथ बहुधा यों कह कर आशीर्वाद देते हैं कि धनवान पुत्रवान हो इस आशीर्वाद के मोती बाबू मानो प्रत्यक्षफल थे। हम ईश्वर से मनाते हैं कि हमारे देश

से ऐसे लोग बहुत से हो। जिन के पास धन है पर उस धनसे देश का भला नहीं होता उन्हें चाहिए कि बाबू मोतीलाल की चाल सीखें।

हरिश्चन्द्र मुखोपाध्याय।

इन्हों ने १२३०हिजरी (१८२४ ई०) वैशाख मासमें कलकत्ता के दक्षिण भवानीपुर में ब्राह्मण के कुल में रामधन मुखोपाध्याय के घर में जन्म ग्रहण किया था। इनके पिता बड़े कुलीन थे और तीन स्त्रियों के पति थे उन में से सब से छोटी स्त्री के लड़के यह थे इन की माता रुकमिणीदेवी भवानीपुर के एक प्रतिष्ठित कुलीन की नातिन थीं। कुलीन लोग बहुधा अपनी स्त्रियों को घर में नहीं लाते वे अपनी संतति समेत अपने बाप ही के यहां रहती हैं हरीश की मा भी योंहीं अपने मामा के घर रहती थीं वहीं उन का विवाह और पुत्र का जन्म हुवा था। इन्हों ने बहुत छोटीही अवस्था में अपने बड़े भाई हारानचंद्र से अंगरेज़ी पढ़ने का लाग लगाया था और सात वर्ष के होने पर भवानीपुर के स्कूल में भेजेगए थे मासिक वेतन न दे सकते थे पर अपनी बुद्धि-मानी से थोड़ेही दिनों में मास्टरों और सहपाठियों को प्रसन्न कर लिया था यह अपनी संथा ऐसी अच्छी रीति से याद रखते और ऐसे २ प्रश्न करते थे कि पढ़ानेवालों को अचरज होता था। छः सात वर्ष पढ़ चुकने पर स्कूल के अधिकारियों ने इन्हें कोई विशेष परीक्षा देने के लिए हिन्दूकालिज में भेजा पर समय थोड़ा मिलने के कारण यह उत्तीर्ण न हो सके और पढ़ना छोड़ कर काम धंधे की चिंता में पड़ गए कुछ दिन में एक नीलाम करने वाले सौदागर के पास आठ रुपए महीने पर नौकर हुए और बहुत दिनों में दो रुपए अधिक पाने लगे जहां यह नौकर थे उस कारखाने के अध्यक्ष मेटेला साहब थे यह इन के परिश्रम से बड़े प्रसन्न रहते थे और ऐसे छोटे काम को ऐसी रुचि के साथ करते हुए देख कर इन के मित्र गण भी समझते थे कि एक दिन यह बड़े आदमी होंगे। इस नौकरी के पहिले यह बड़े निर्धन हो गए थे जिस का वृत्तांत इन्हों ने स्वयं एक दिन वराहनगर निवासी शंभुचंद्र मुकरजी से कहा था कि—एक दिन घर में कुछ भी न था कोई ऐसा पीतल का बासन भी न था जिसे गिरो रख के एक दिन का काम चलाते बस हम थे और दरिद्र था पर यह विश्वास न था कि ईश्वर सुख न

लेंगे उस समय एक जमींदार के मुख्तार ने आकर कहा कि मेरे पास थोड़े से बंगला के कागजपत्र हैं इन्हें अंगरेज़ी में कर दीजिए तो दो रुपए दूंगा हम ने उन दो रुपयों को दो अशरफी समझ के उस का काम कर दिया— इस बात से विदित होता है कि हरीश बाबू लड़कपन ही में अंगरेज़ी की योग्यता और परमेश्वर का विश्वास रखते थे। इन की अंगरेज़ी योग्यता का भी प्रमाण है कि एक मनुष्य को अंगरेज़ी में अर्ज़ी लिख एक यह दी थी उसी के लेख पर प्रसन्न हो के टेला साहब ने इन्हें अपने आफिस में रख लिया था। दरिद्र के मारे इन्हें स्कूल छोड़ना और ऐसी छोटी नौकरी पर रहना पड़ा था पर ऐसी दशा में भी इन्हों ने कभी अन्याय से रुपया जोड़ने का साहस नहीं किया! हां दश रुपया मासिक में निर्वाह न हो सका तब वेतन वृद्धि के लिए निवेदन किया पर उस का कुछ फल न हुआ तो वह काम छोड़ दिया। फिर १२५४ हिजरी (१८४७ ई०) में सेना विभाग के मध्य एक पचीस रुपए की जगह का समाचार सुनके उस के पाने का यत्न किया उस नौकरी में आगे अधिक प्राप्ति की आशा थी इस से बहुत लोग उसे चाहते थे पर परीक्षा में यही सब में उत्तम रहे अतः इन्हें वह पद मिल गया। वहां इन की बुद्धिमत्ता और सच्चरित्रता के कारण मि: फर्नीवर और मि: मेकेञ्जी आदि अफ़सर इन के मित्र हो गए और इन्हें विद्यानुरागी देख के पुस्तकादि से भी सहायता करने लगे तथा यह भी अच्छी २ पुस्तकें देखने की अभिलाषा से छोटी तनखाह में से दो रुपया मासिक देना स्वीकार कर के कलकत्ते के साधारण पुस्तकालय के मेम्बर हो गए और अवकाश के समय को सुखपूर्वक ग्रन्थावलोकन में बिताने लगे। काम की सावधानी से थोड़े ही दिन में सब अधिकारी इन की प्रतिष्ठा करने लगे तथा कर्नल मेलडी और चाम्पनिज साहब प्रियपात्र हो गए और वर्ष के भीतर ही सौ रुपए महीने का काम तथा धीरे २ असिस्टेण्ट मिलिटेरी आडिटर का पद दे दिया बीच में गोलमाल भी कई हुए क्योंकि यह स्वाधीन प्रकृति के पुरुष थे किसी का अन्याय न सह सकते थे एक दिन किसी हिसाब में भूल देख के कर्नल चाम्पनिज ने कुछ डांट बताई पर हरीश बाबू ने देखा कि हमारा अपराध नहीं है यह यों ही अभिमान करते हैं इस से नौकरी छोड़ने पर उतारू हो गए किन्तु कर्नल

गेलडी ने इन की तेजस्विता के अनुरोध से नौकरी न छोड़ने दी बरञ्च चेम्प निज साहब से मेल करा दिया यह घटना अकस्मात ही गई थी नहीं तो उक्त कर्नल तो इन से बड़ी ही प्रीति करते थे और जब तक इस देश में रहे थे इन के मित्र ही बने रहे थे। एक बार और भी हेलिंबेरी नामक आफिसर के कठोर वाक्य पर इन्हों ने पद त्याग करना चाहा था तब कर्नल चम्पनीज साहब ने हेलिंबेरी को लज्जित कर के औरों को भी समझा दिया था कि यह तेजस्वी ब्राह्मण युवक अपमान सहनेवाले नहीं हैं!

यह कुलीन थे इस से बारह ही वर्ष में ब्याह हो गया था स्त्री बाली के उत्तर पाड़ा के गोविंदचंद्र बनुरजी की कन्या थीं उन के सोलह बरस की अवस्था में एक बेटी हुई पर छठी ही के दिन मर गई फिर दूसरे साल लड़का हुआ वह पंद्रह दिन का था तब उस की माता मर गई इस से वह भी थोड़े ही दिन जिया बाल्यबिवाह का बहुधा ऐसा ही फल होता है।

स्त्री के मरने पर चार मास के उपरांत मामा के अनुरोध से इन्हों ने फिर ब्याह किया। पढ़ने में इन को बड़ी ही रुचि थी अंगरेज़ी में बड़ी योग्यता रखते थे कलकत्ता आदि के सभी समाचारपत्रों में लिखते थे पर इतने से जी न भरा तो हिंदूइंटलिजेंसर नामक साप्ताहिक पत्र के अधि-कारी काशी प्रसाद घोष से मिल के उन के पत्र के प्रधान लेखक होगए पर मन न मिलने से और सम्पादक ने कई लेख न छापे इस से इन्हों ने उस पत्र की उन्नति का उत्साह छोड़ दिया इसी समय में कलकत्ते के किसी साहित्य रसिक धनवान ने बंगालरेकार्डर नामक पत्र निकाला यह उस के सम्पादक हो गए और पूर्व कथित पत्र का सम्बन्ध छोड़ दिया।

कुछ दिन पर वह भी बन्द हो गया और हिन्दू पेट्रियट निकला उस का सम्पादनभार इन्हीं को मिला उक्त पत्रके अध्यक्ष मधुसूदनरायने उसमें घाटा देखके उसका छक बेंचना चाहा पर कोई लेने वाला न देखा तो कागज बंद करदिया और प्रेस बेंच डाला हरिश्चंद्रने किफायतके गुण से रुपया कुछ इकट्ठा किया था वह उस यंत्र में लगा दिया और १२६२ हिजरी (१८५५ ई०)के जेष्ठ मास से अपने भाई के नाम से पेट्रियट फिर निकालने लगा छापाखाना और उसका दफतर भवानीपुर लेआए इस पीछे १२६४ हिजरी (१८५७ ई०)में सी

रुपए और उस साल में आप भी कुछ घटी पड़ी पर उसे धीरे से सहन कर लिया तथा अपनी विद्या और बुद्धि के बल से पत्र को जगत विख्यात और अति लाभदायक बना के छोड़ा। वाम्पलिज साहब पार्लमेंटिक विषयों और तार की खबरें सगाने में इन्हें बड़ी सहायता देते थे इस से हरिश्च बाबू का उत्साह और कृतज्ञता और भी बढ़ गई पर इसी वर्ष कुछ सिपाही अंगरेज़ों से बिगड़ खड़े हुए तब अंगरेज़ों ने समझा कि कौन जाने सभी देशी राजद्रोही हो जायं किंतु हरीश की लेखनी ने उन्हें भली भांति विश्वास करा दिया कि देशी लोग बड़े सरल और राजभक्त हैं तभी से पेट्रियट का आदर और आमदनी बढ़ गई यह पत्र इन के समय में सचमुच राजमंत्री का काम करता था लार्ड कैनिंग इसे बड़े स्नेह से देखते थे यदि किसी दिन विलंब हो जाता तो आदमी भेज के पत्र मंगाते थे पार्लियामेंट के मेम्बरों ने भी लार्ड कैनिंग की इस बात का अनुमोदन किया था। विद्रोह शांत होने पर चैंपनिज साहब विलायत चले गए और उन का पद हैलिंगटन नामक साहब को मिला इन से चैंपनिज साहब चलते समय हरीश इत्यादि प्रधान २ लोगों की भेंट करा के कह गए थे कि—जो काम हज़ार रुपए महीने के अंगरेज़ करते वह यह देशी लोग दो या तीन सौ रुपए में बड़ी अच्छी तरह करते हैं—हम और ग्रे बडी साहब बहुत दिनों से इनके साथ प्रीति रखते हैं और आशा है कि आप भी कृपा कर के प्रीति ही रक्खेंगे—इस के उपरांत हरीश बाबू की उन्नति हो चली पर खेद है कि हैलिंगटन साहब इन के साथ मिलना न रख के प्रभुता प्रकाश करते थे यद्यपि मुख से मित्र ही बनते थे हैलिंगटन का निज छोबाडाल था उन्होंने इन्हें दो बार पदच्युत किया पर फिर बुला लिया एक बार हरीश बाबू स्वयं नौकरी छोड़ने पर उद्यत हुए पर फिर न छोड़ी यह सदा वाम्पलिज और मैनडी साहब की सुध करके लम्बी सांस लिया करते थे।

हरीश के जन्म लेने से भवानीपुर का गौरव बढ़ गया था यह भी वहां के लोगों की उन्नति में अपने को उन का ऋणी समझते थे विद्या की उन्नति के लिए वहां एक सभा नियत की थी वहां समय २ पर आकर ये चर्चा किया करते थे। धीरे २ सभी लोग इन्हें आदर का पात्र जानने लगे और इन के कारण कई मित्रों ने भी उच्च पद प्राप्त किए उन में रमाप्रसाद राय

और शम्भुनाथ पण्डित मुख्य थे उन्हों ने सदर अदालत में कुछ दिन वकील रह के बड़ा नाम पाया था और अन्त को हाइकोर्ट में जजी की थी।

हरीश ने धीरे २ इतिहास, मनोविज्ञान, न्याय और धर्म शास्त्र भी अच्छी तरह सीखा और गणितशास्त्र में भी अच्छा अभ्यास किया था यूरोप के प्रधान २ ग्रंथों की आलोचना भी पेट्रियेट में छापा करते थे तथा क्यंट और हेमिलटन के मनोविज्ञान का अवलम्बन कर के तो कई लेख बहुत ही अच्छे लिखे थे यह अपनी विद्या के कारण प्रधान विद्वान कहलाने के योग्य थे।

भारतवर्ष में अंगरेजों की शक्ति का आदि वृत्तांत और शासनप्रणाली जानने की इन्हें बड़ी रुचि रहती थी पार्लिमेंट की आमदनी और खर्च का हिसाब तो मुख ही पर रहता था महासभा के बहुत ही पुराने काग़ज़ पत्र देखने से अंगरेजों के अधिकार का इतिहास पूर्ण रूप से जानते थे नित्य की खोजखाज से भारत और इंगलैंड का वृत्तांत इतना जान लिया था कि अंग्रेजशासित हिंद का इतिहास लिखनेवाले थे पर दुःख का विषय है कि मृत्यु ने न लिखने दिया।

इन के मरने से दो ही एक वर्ष पहिले बंगाल में नील का बिद्रोह खड़ा हुवा नीलवाले अंगरेज़ प्रजागण पर बड़ा अत्याचार करते थे (जिस का वृत्तांत राय दीनबन्धु मित्र बहादुर कृत नीलदर्पणनाटक में भली भांति लिखा है) प्रजा ने नील का बनाना छोड़ दिया और बिगड़ उठी। इस समय हरीश बाबू सब अत्याचार अपने पत्र में प्रकाश करके गवर्नमेंट और सर्व साधारण को बिदित करनेलगे इस बात पर यह जानने के लिए एक कमिशन नियुक्त हुवा कि दोष किस का है इस में बंगाल के बड़े २ लोगों की शाक्षी ली गई हरीश ने भी १२६७ हिजरी (१८६० ई०) में शाक्षी दी और अंत में यही निश्चय हुवा कि नीलवाले साहब ही अत्याचार करते हैं। इस बिषय में हरीश ने सरकार की बड़ी सहायता दी थी और इन्हीं के प्रयत्न से १२६८ हिजरी में गवर्नमेंट ने इस का प्रबंध किया था। इन्हों ने नील कमिशन सामने जो शाक्षी दी थी उस से इन के चित्त का भाव बड़ी उत्तमता से प्रकाशित होता है अतः हम उस शाक्षी में से कुछ बातें यहां लिखते हैं। कमिशन में चार अंगरेज और एक बंगाली नियुक्त किए गए थे इन में दो जजे

गवर्नमेण्ट के प्रतिनिधि थे एक नीलवालों का प्रतिनिधि था और एक २ मिश नरियों तथा ज़मींदारों की प्रजाओं का——

सभा ने हरीश बाबू से प्रश्न किया—क्या नीलविद्रोह के समय प्रजा-गण वा और किसी पक्षवालों ने आप से कोई सम्मति ली थी ?

हरीश ने उत्तर दिया—हाँ, बहुत से ज़मींदारों अनेक प्रजाओं और मध्यवर्ती भूस्वाधिकारियों ने कई ज़िलों से आ आकर मुझ से उपदेश मांगा था।

प्रश्न—मुफस्सिल से जो पत्र आप को मिले उन में किस बात का विशेष लेख था ?

उत्तर—नीलवालों का अत्याचार का विवरण और मेरी सम्मति की आवश्यकता ही अधिकतः लिखी थी।

प्रश्न—नील प्रधान ज़िलों में आप ही गए थे वा किसी मनुष्य को भेजा था ?

उत्तर—मैं उन ज़िलों में कभी नहीं गया वहीं के लोग भवानीपुर में आते थे। मैंने कई स्थानों में लोग भेजे थे सो केवल समाचार जानने के लिए नहीं वरंच वकील और मुख़्तारों को प्रजा की ओर से मुकद्दमा चलाने का अनुरोध करने के निमित्त।

प्रश्न—आप ने कभी प्रजागण को नीलविद्रोह के लिए भड़काया भी था ?

उत्तर—कभी नहीं ! सभा ने हमें इस बात के अस्वीकार करने का अव सर दिया इसलिए हम सभा को धन्यवाद देते हैं *

प्रश्न—क्या आप जानते हैं कि नीलवालों ने प्रजापर किस प्रकार का अत्याचार किया है ?

उत्तर—हाँ उन्हों ने कोठे अंधेरे घर में बहुत से लोगों को बन्द किया, उन की सम्पत्ति लूट ली, पुलिस के द्वारा स्त्रियों का अपमान किया इत्यादि——

* इन्हें कुछ लोग नील विद्रोह में उत्तेजना देने का कलंक लगाते थे उसी के मिटाने का सभा में अवसर पाकर इन्हों ने सभा को धन्यवाद दिया था।

इस बात पर नीलवालों के प्रतिनिधि फारगुसन साहेब ने कुछ रुष्ट होके प्रश्न किया- क्या आप सचमुच इन बातों का विश्वास करते हैं ?

उत्तर -- हां निस्संदेह ! प्रजा को कैद करने का हमें पूरा पता मिला है और अदालत में भी प्रमाणित हो गया है इस से हमें विश्वास है।

प्रश्न---नील के विषय में जो आन्दोलन हो रहा है, जिस पर प्रजा का भला बुरा निर्भर है उस पर कुछ कहना वा कोई सिद्धांत ठहराना बड़ा भारी काम है क्या आप ने गवाही देने के पहिले इस बात का अच्छी प्रकार से विचार कर लिया है ?

उत्तर---हां ! नील संकट के विषय में मैं ने बड़े प्रयत्न और सावधानी से विचार कर लिया है। हमें पूरा विश्वास है कि नील के सम्बन्ध की वर्तमान प्रथा प्रजा के लिए हितकारिणी नहीं है। यह सिद्धांत मैं अपने पेट्रियट में भी कई बार प्रकाशित कर चुका हूं। पर आगे नीलवालों और प्रजाओं की कैसी निभेगी यह मैं निश्चय पूर्वक नहीं कह सकता।

इस गवाही से हरीश का असीम साहस, दृढ़ता और देश भक्ति प्रकाशित होती है पर बहुत थी इस से यहां पर पूरी नहीं लिखी गई। इन का पूरा २ चरित्र लिखने से बालकों की समझ में न आ सकता इस से हमने मोटी ही मोटी बातें लिखी हैं। वह बड़े भारी बुद्धिमान थे सब बातों पर सूक्ष्म विचार करते थे कभी बुद्धि को शिथिल न होने देते थे। स्मरणशक्ति भी साधारण न थी कोई बात कभी भूलते न थे राजनीति पर भी बड़े चाव से दृष्टि रखते थे इन की स्मरण शक्ति का परिचय इस कथा से मिलजायगा---एक दिन एक वाटिका में कुछ विद्वान लोग एकत्र हुए थे उन में यह भी थे बातों २ में मुप्रसिद्ध प्यारीचन्द्रमित्र ने कहा 'मेकाले की नाईं मनोहर लेख कोई नहीं लिखसका' यह सुनके हरीश बोले 'गिबन का लेख उस से भी अच्छा है' इस के प्रमाण में गिबन का समस्त इतिहास ज्यों का त्यों सुनागए इस पर सभों ने दांतों में उंगली दबाली।

यह परिश्रमी भी बड़े थे प्रातःकाल उठके बहुत से समाचारपत्र पढ़ते थे और उन के अच्छे २ आशय स्वयं संग्रह करते थे और उस समय जो मित्र गण आते थे उन से बातचीत भी करतेही रहते थे दस बजतेही खापीकर

दफ़तर जाते थे आठही दस मिनिट में स्नान और भोजन कर लेते थे शंभु-
नाथ पंडित का कथन है कि—हरीश के साथ खाने बैठने से लज्जित
होना पड़ता है — पांच छः बजे तक आफ़िस का काम करके पुस्तका-
लय में जाते वहां की नई पुस्तकादि शीघ्रही पढ़ कर भारतवर्षीयसभा
में पहुंचते थे * वहां चिट्ठीपत्रियों का ढेर निपटा के दस ग्यारह बजे
रात को घर आते थे और मित्रों के साथ मन बहलाते थे और जिस दिन
अखबार छपता था उस दिन रात भर जागते थे पेट्रियट सप्ताह में दो बार
निकलता था। छपने ही की रात को सम्पादकीय लेख लिखते थे। इन का
परिश्रम सुन के अचरज होता है पिछले दिनों में प्रति दिन छः कोस जा के
वेहलाटोली (कानवालिसस्कायर में है) में डाकटरडेसाहब का मनोविज्ञान
विषयक उपदेश सुनने जाते थे।

यह भरोसा अपनाही रखते थे किसी बात में किसी की सहायता न
चाहते थे राजनीतिज्ञ ऐसे थे कि बड़े २ मटर थर्मान और डनलिफ इन के
यहां आके सलाह लेते थे विचारशक्ति में शत्रु भी इन की बड़ाई करते
थे लोगों ने एक बार इन्हें देश के किसी उपकार के निमित्त विलायत भेजने
का मानस किया था पर मा ने नहीं जाने दिया। इन का स्वभाव सचमुच
पवित्र और उदार था पराया उपकार ही अब अपना मुख्य काम समझते थे
मन के साहसी भी बड़े थे निर्धन निस्सहायों की सहायता में बहुत से बड़े २
लोग इन के द्वेषी हो गए थे सहायता चाहनेवालों को कुछ करना न
पड़ता था केवल भवानीपुर गए और सहायक हरीश को विद्यमान पाया
संसार के किसी सुख की चाह न थी और दुखियों को सुखी बनाना ही भाता
था किसी जाति वा सम्प्रदाय विशेष का हित करना न चाहते थे सभी के
उपकारी थे। एक बार किसी बड़े आदमी ने इन्हें सदर की वकालत या

---

* कलकत्ते में प्रधान लोगों की एक सभा है जो प्रजा के हित की बातें
यहां की गवर्नमेण्ट तथा पार्लिमेण्ट में निवेदन करती रहती है इसे ब्रिटिश इंडि-
यन एसोसिएशन अर्थात् भारतीयसभा कहते हैं इस के स्थापन में हरीश बाबू ने
बड़ा प्रयत्न किया था और कार्यकारी विभाग के सभ्य थे।

वाणिज्य के लिए अनुरोध किया इस पर इन्हों ने उत्तर दिया कि इन कामों में दिन रात फंसे रहना पड़ेगा तो दूसरों की सेवा न हो सकेगी—इन से सहायता वा उपदेश लेने जो आता था विमुख न जाता या जो काम इन की सामर्थ्य से दूर होता उस में कह देते थे कि—धन तो हमारे पास नहीं है हां हमारे समय और परिश्रम से जो कुछ हो सके हम हाजिर हैं—यह उदार भी ऐसे थे कि एक बार एक अंगरेज ने कहा था कि तुम्हें जो किसी राजा के मंत्री का पद मिले तौभी तुम अपना राज्य अर्थात् पत्रसम्पादन न छोड़ोगे इस के कुछ ही दिन पर इन्हें एक उच्च पदवी मिलती थी तब इन्हों ने उस साहब से कहा था कि—आप का कहना ठीक था मैं ने वह पद इसी से नहीं अंगीकार किया कि फिर पेट्रियट की एडीटरी न हो सके गी। पेट्रियट का अर्थ है देशहितैषी इसे इन्हों ने प्रत्यक्ष दिखा दिया था।

यह घर में जिस रूप से रहते थे उस का परिचय यह है कि सताई हुई प्रजा को अदालत जाने के लिए अर्जी लिख देते थे आवश्यक खर्च के लिये रुपया देते थे धनवानों से निर्धनों को सहायता दिलवाते थे और सब लोगों को उचित उपदेश देते घर में रइयत अपना दुःख ही सुनाया करती थी उसे सुन सुनकर यह भी रोया करते थे और दुःख दूर करने में तन मन धन से लग जाते थे गरीबों को भी भोजन और धन देते थे रोगियों की सेवा करते थे अत्याचारियों को निर्भय हो के दंड दिलाने की चेष्टा करते थे यही इन के काम थे।

बड़े परिश्रम ही के कारण यह बहुत दिन नहीं जिए मरणशय्या पर पड़े हुए भी इन्हों ने कहा था कि—मैं ने अंगरेज हाकिमों को यह दिखलाने की मनसा से छुट्टी न मांगी थी कि बंगाली लोग मरने के डर से कर्तव्य को नहीं छोड़ते—प्रजा को नीलवालों से बचाने में भी इन्हें बड़ा ही कष्ट सहना पड़ा था एक ओर निलहे अंगरेज धमकाते थे एक ओर अदालत इन का घर बार नीलाम कराती थी (भारतवर्षीय सभा ने रुपया दे कर घर बचा दिया था) एक ओर समाचारपत्र निंदा करते थे पर इन्हों ने अपनी भौंह पर बल भी नहीं आने दिया अपना काम दृढ़ता से करते ही रहे ६ घर से रुपया लगा के स्थान २ पर सम्वाददाता नियत किए थे।

निरहंकारी भी एक ही थे विद्या वा धन वा धर्म का आडम्बर कभी न

बालकगण देखो ! हरीश बाबू कैसे मनुष्य थे एक साधारण ब्राह्मण के बालक होने पर केवल अपने श्रम से कितनी उन्नति की थी। मरने के कुछ महीने पहिले ४००) की तनखाह हो गई थी यदि देशहितैषी न होते तो क्या कुछ न कमा लेते। पर कोई धन्धा केवल इसी लिये नहीं किया कि फिर देश की सेवा न निभ सकेगी यह कोई प्रसिद्ध ग्रंथकार वा प्रधान राजपुरुष न थे केवल सेना विभाग के एक कर्मचारी ही थे पर जो कुछ कर गए वह बड़े बड़ों से होना कठिन है अपने सुख दुःख की कुछ न समझना और पराए हित में लगे रहना इन्हीं का काम था मनुष्य का क्या कर्तव्य है यह अपने आचरण से दिखा गए और लोगों के चित्त पर बहुत दिन के लिए लिख गए हैं जो लोग विद्या के रसिक हैं यह इन की देश हितैषिता कभी न भूलेंगे परोपकार में यह इतने प्रसिद्ध हुए थे कि सैकड़ों कोस पर रहने वाले दीन दुखी किसान जानते थे कि हमारा सहायक भवानीपुर में बैठा है । खेतिहरलोग गीत बना बना के इन का कृतज्ञतापूर्वक गुण गाते थे * आहा ! धन्य है ऐसों के महान और मनोहर जीवन को ! कलकत्ता, कृष्णनगर, मेदिनीपुर, जंगीपुर आदि स्थानों में इन के स्मरण

---

* किसी नील की कोठी में एक हरीश नाम का अत्याचारी दीवान था उसे और इन हरीश को मिला के लोगों ने यह गीत बनायाथा—हिय हिय रहे हरीस समाय। एक हरीस उजारत खेतन एक न लिए बचाय ॥ नील बुआय एक अधम सों धरती दई नसाय । इक की दया दीठि सों तहँ अब अरहरी अमित दिखाय ॥ इत्यादि ।

"भास छे मन मनेर हरिशे । (आगे) लूटे खेत एक हरिशे, (एखन) बाँचाले एक हरीशे; बुने २ नील कर्तो जमी खील, (एखन) होते छे ताय अड़र कलाइ सरिसे " इत्यादि ॥

हरीश बाबू की अकाल मृत्यु और नीलदर्पण नाटक का अंगरेजी में अनुवाद करने के कारण लं साहब को कारावास मिलने पर यह कविता बनी थी।

कुसमय मरे हरीश गए लं साहब कारागार। सुबरन मय बंगाल नील कपि कीन्हों छिन महँ छार ॥

"असमये हरिश मलो लंगेर हलो कारागार। नील बांदरे सोनार बंगाला करलो छार खार ॥"

चिन्ह स्थापित करने की बड़ी भारी चेष्टा की गई थी [illegible] के म
पर जैसा उन के गुणज्ञ लोग करते हैं वह सब हुआ था सुप्रसिद्ध
और राजनीतिज्ञ बाबू शम्भुनाथ मुकर्जी का कथन है कि उस समय के
प्रसिद्ध जमींदार ने कहा था कि एक गरीब ब्राह्मण के लड़के की मृत्यु
उस को पाषाणप्रतिमा बनती है और बड़ों महाराजों के मरने पर उन
स्मरण चिन्ह बनाने की क्या रीति है? — इस प्रश्न के उत्तर में
हरिश्चन्द्र मुकर्जी का गुण जाननेवाले कह सकते हैं कि — महाराज
महाराजा तो हरिश्चन्द्र की चरणधूलि स्पर्श करने की भी योग्यता
रखते ॥

यदि ग्राहकों की सहायता मिलेगी तो ये सब अमूल्य मनोहर उपन्यास क्रमशः प्रति मास एक एक करके छपा करेंगे। ग्राहकों के सुबीते के लिए बहुत अधिक व्यय होने पर भी मूल्य वही रहेगा जो बंगला में है।

यदि १०० ग्राहक भी हो जायंगे तो एक ही वर्ष में सब छाप दिए जायंगे।

जो महाशय पहिले से सब के ग्राहक होंगे उनके मूल्य और भी कम कर दिया जायगा।

हिन्दीभाषा के पुनर्जन्मदाता भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र के सब ग्रन्थ भी छपकर तयार हैं। उपन्यासों और इन सब ग्रन्थों को एक साथ लेने से मूल्य कुछ कम कर दिया जायगा।

चूकिए न, ऐसा अवसर फिर न हाथ आएगा; ग्राहक श्रेणी में नाम लिखा कर नवीन नवीन उपन्यासों की सैर कीजिए और यश के भागी हूजिए।

साहिबप्रसाद सिंह।

खड्गविलास यंत्रालय

बांकीपुर।